यु क्रां द

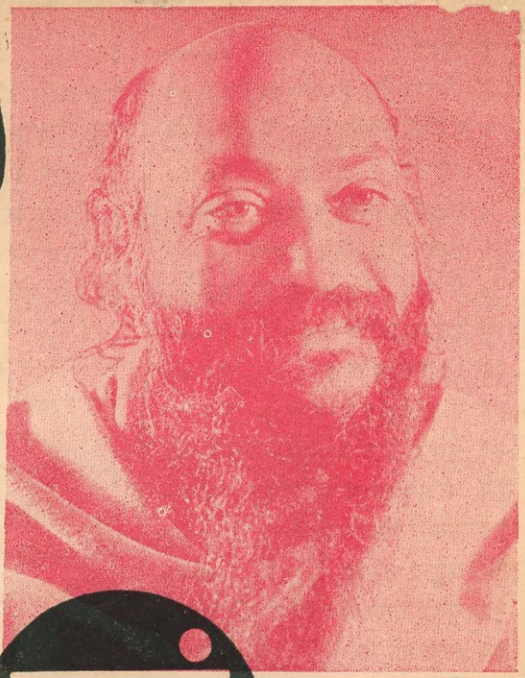

दिसंबर, १९७३

मूल्य : एक रु०

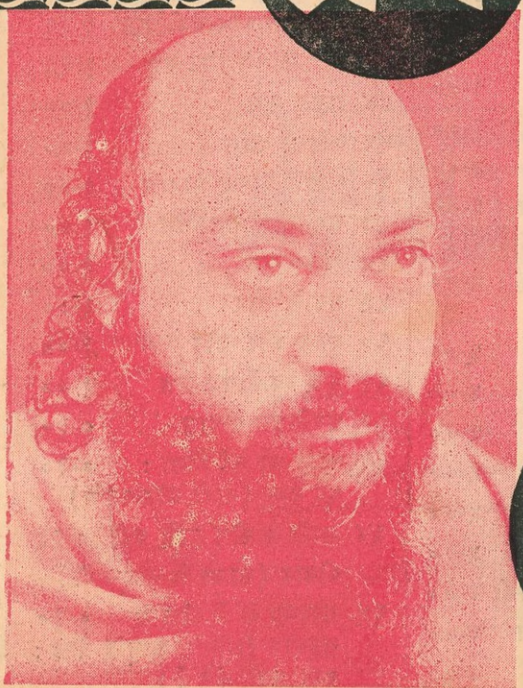

भगवान रजनीश-साहित्य

१ ताओ उपनिषद् ४०-००
२ गीता-दर्शन (अध्याय६) ३०-००
३ महावीर मेरी दृष्टि में ३०-००
४ महावीर वाणी भाग १ ३०-००
५ महावीर वाणी भाग २ ३०-००
६ जिन खोजा तिन पाइयां २०-००
७ मैं मृत्यु सिखाता हूं २०-००
८ इशावास्योपनिषद् १५-००
९ निर्वाणोपनिषद् १५-००
१० गीता-दर्शन अध्याय: ७ १२-००
११ प्रेम है द्वार प्रभु का ९-००
१२ घाट भुलाना बाट बिनु ७-००
१३ नव-संन्यास क्या ? ७-००
१४ समुन्द समाना बुंद में ७-००
१५ सूली ऊपर सेज पिया की ७-००
१६ सत्य की पहली किरण ६-००
१७ मैं कहता आंखन देखी ६-००
१८ क्रांति बीज ६-००
१९ अन्तर्वीणा ६-००
२० ढाई आखर प्रेम का ६-००
२१ प्रभु की पगडंडियां ६-००
२२ संभावनाओं की आहट ६-००
२३ संभोग से समाधि की ओर ६-००
२४ प्रेम के फूल ५-००
२५ अस्वीकृति में उठा हाथ ५-००
(भारत-गांधी और मेरी चिंता)
२६ ज्यों की त्यों धरि दीन्हीं चदरिया ५-००
२७ साधना-पथ ५-००
२८ अन्तर्यात्रा ५-००
२९ सत्य की खोज ५-००
३० मिट्टी के दिए ५-००
३१ मुल्ला नसरुद्दीन ५-००
३२ गहरे पानी पैठ ५-००
३३ काम-योग धर्म और गांधी ४-००
३४ समाजवाद से सावधान ४-००
३५ शून्य के पार ४-००
३६ पथ के प्रदीप ४-०
३७ शांति की खोज ३-५०
३८ मैं कौन हूं ३-००
३९ शून्य की नाव ३-००
(सत्य का सागर शून्य की नाव)
४० नए संकेत २-००
४१ पथ की खोज २-००
(सिंहनाद का नया संस्करण)
४२ अज्ञात की ओर २-००
४३ सत्य के अज्ञात सागर का आमंत्रण २-००
४४ क्रांति की वैज्ञानिक प्रक्रिया १-५०
४५ ज्योतिष : अद्वैत का विज्ञान १-५०
४६ ज्योतिष : अर्थात अध्यात्म १-५०
४७ जनसंख्या विस्फोट : समस्या और समाधान १-५०
४८ ध्यान एक वैज्ञानिक दृष्टि १-५०
४९ प्रगतिशील कौन १-५०
५० प्रेम और विवाह १-५०
५१ विद्रोह क्या है ? १-५०
५२ मेडीसिन और मेडीटेशन १-२५
५३ सारे फासले मिट गए १-२५
५४ अमृत कण १-००
५५ अहिंसा दर्शन १-००
५६ अज्ञात के नए आयाम १-००
५७ धर्म और राजनीति १-००
५८ बिखरे फूल १-००
५९ मन के पार १-००
६० युवक और यौन १-००
६१ कुछ ज्योतिर्मय क्षण १-००
६२ अवधिगत संन्यास ०-३०
६३ क्रांति की नई दिशा : नई बात (नारी और क्रांति) ०-३०
६४ क्रांति के बीच सबसे बड़ी दीवार (भारत के साधु-सन्त) ०-३५
६५ संस्कृति के निर्माण में सहयोग (जीवन जागृति केन्द्र : क्या, क्यों, कैसे ?) ०-३०

भगवान रजनीश की सृजनात्मक युग क्रांति दर्शन की मासिक संकलन पत्रिका

युक्रांद

वर्ष – ५ अंक – ११ : १२

मूल्य एक प्रति : १-०० रु.
,, वार्षिक : १२-०० रु.

दिसम्बर १९७३

मानसेवी संपादक मंडल :

○ अरविन्दकुमार
○ डॉं. उर्मिला, पी-एच.डी.
○ 'आकुल' राजेन्द्र
(साधु आनन्द 'आकुल')
○ आलोक पाण्डे

☐ स्वामी धर्म सरस्वती, व्यवस्थापक

युक्रान्द

दिसंबर

७३

★

अ नु क्र म णि का

लेख : संकलन

: ९ : नारी का अनूठा आदर्श—द्रौपदी
संकलन : स्वामी योग चिन्मय, बम्बई

: १४ : अमृत-कण
भगवान श्री के बोध-वचनों से

: १५ : कृष्ण और गीता
संकलन : अरविन्दकुमार, जबलपुर

: ४२ : होने दो विचारो मत : इन्दौर साधना शिविर : एक झलक
स्वामी आनन्द गौतम, इन्दौर

गीत : काव्य

: ३ : अहम् का शुकदेव
डा० किशोर काबरा, अहमदाबाद

: ५ : मेरी संन्यास यात्रा
स्वामी योग प्रीतम, भीलवाड़ा

स्वत्वाधिकारी प्रकाशक : अरविन्दकुमार, ७६०, राइट-टाउन, जबलपुर.
मुद्रण : अशेष प्रिन्टर्स, ७८१, राइट-टाउन, जबलपुर. ☎ 2957 P.P.

अहम् का शुकदेव

सन्ध्या के झुरमुट का एकान्त देखकर
क्यों कभी-कभी डर जाता है
मेरे मन के एकाकी पिंजरे में कैद
मेरा पालित पोषित अहम् का शुक ।

दिन भर इसको मैं वासना के दाने देता हूं
निन्दा या स्तुति
जो भी गाता है, गाने देता हूं ।

अभिव्यक्ति की चोंच पर
मैंने सोना मढ़वा दिया है
प्रगति के पांवों में
मैंने घुंघरू की गुलामी को जड़वा दिया है ।

रोज सवेरे
मैं इसका पिंजरा साफ करता रहा हूं ।

यह घायल कर चुका है
मेरे इस लोक के कई रिश्तों को
पर मैं अब तक इसे माफ करता रहा हूं ।

आंसू और पसीने की कटोरियां भी
दोनों बाजू रख ली हैं मैंने ।

आलोचना की मिर्ची को
इसके सामने रखने के पूर्व
चखली है मैंने ।

मैं आकाश की कसम खाकर कहता हूं—
आज तक इसके मैंने पंख नहीं काटे
पर
यह त्याग और वैराग्य की फुनगी पर
जाता नहीं तो मैं क्या करूं ?

मैंने
कई बार इससे कहा
हाथ जोड़ कर
पैर पूज कर—
ओ मेरे अहम् के शुकदेव !
कब तक पिंजरे में ही राम-राम रटते रहोगे ?
भोजन भर के लिए
जीवन भर सरे आम मिटते रहोगे !

पर
यह तो मौन श्रोता बनकर
मेरा व्याख्यान सुनता रहता है

यह हंसता रहता है
और मेरा अस्तित्व
सिर धुनता रहता है ।

आखिर एक दिन मैंने
पंख पकड़कर
चोंच जकड़कर
इसका पिंजरे का मोह
छुड़ा ही दिया ।

हाथ पर तौला
और आकाश में उड़ा ही दिया ।

पर यह क्या ?
वह उड़ा तो नहीं
पर
गोले-सा जमीन पर गिर गया ।

ओले-सा लुढ़क कर
पानी-सा बिखर गया ।

ओह !
साधना और तप की पूर्व तैयारी के बिना
मैंने क्यों उड़ा दिया
अपने जन्मों के कैद
लूले लंगड़े, उड़ने में असमर्थ
अहम् के पंछी को ?

अब आज यह स्थिति है
तोते की जगह
मेरा प्रायश्चित पिंजरे में कैद है
और मैं
पिंजरे के सिरहाने बैठा
इस बुढ़ापे में
अपने टूटे हुए अहम् पर
सान्त्वना के पैबन्द लगा रहा हूं ।

यह तोता
अब भी शाम-सवेरे
'राम-राम' बोलता है
पर मुझे ऐसा सुनाई देता है
जैसे यह 'मरा-मरा' बोल रहा हो ।

जीवन में मैंने जो भूल की
मौत के समय उसकी पोल खोल रहा हो ।

□ *डा० किशोर कालरा*, अहमदाबाद

मे ✕ री

संन्यास-यात्रा

●

कुछ भी ठीक नहीं लगता,
सारे सम्बन्ध अर्थहीन हो गये हैं
और मैं इतनी बड़ी भीड़ में भी अकेला हो गया हूं।
कोई बात नहीं रुचती,
कोई स्वर नहीं लुभाता
और कोई प्रीत—
हृदय के किसी छोर को स्पर्श नहीं कर पाती।
मित्र! तुम्हारे समाज के द्वारा बनाई गई सभी परिधियों को
मैंने अस्वीकार कर दिया है
और मैं भीतर उतरने लगा हूं—
निपट अकेला—अनजान—
अपनी ही आग में झुलसने के लिये।
मैं तुम्हें कैसे समझाऊं कि
अज्ञात की यात्रा का दु:ख
ज्ञात की यात्रा के सुख से कितना बेहतर है।

□ □ □

तुम जानना चाहते हो कि
तुम्हारी दुनियां से कटा हुआ मैं
अपने निपट अकेलेपन में भी
इतना आनन्दित कैसे हूं?
कैसे हूं इतना संगीतमय?

जबकि मैंने तुम्हारे सभी साजों से स्वरित होना
बन्द कर दिया है;
पर कुछ ऐसी भी स्थितियां होती हैं
जिन्हें लाख कहकर भी नहीं समझाया जा सकता।
मैं जानता हूं कि
अभी यह पुलक कुछ नहीं है
पर इसे पाने के लिए भी
मैं किस आग में जला हूं—तुम क्या जानो !
मैं तुम्हें कैसे बताऊं कि
इस आग में जलना क्यों चुना जाता है—
हजार सुखों और सुविधाओं के बावजूद भी।
वह कशिश मैं तुम्हें कैसे समझाऊं
जो तुम्हारी दुनियां के किसी चुम्बक में नहीं है
और वह प्यास
जिसे शरीर के उद्गम से निकलने वाला
कोई झरना नहीं बुझा सकता।
तुम पूछना चाहते हो—
इस आग में मेरा सब कुछ जल गया है
फिर भी मैं इतना खुश क्यों हूं ?
पर मेरे मित्र !
इसे नहीं समझाया जा सकता
यह इसे आग में जलकर ही अनुभव किया जा सकता है।

□ □ □

तुम्हें नहीं रुचता—
इस तरह मेरा अपने में डूबे रहना
और तुम चाहते हो कि
मैं तुम्हारी दुनियां में लौट आऊं,
पर मित्र ! मैं तुम्हारी आवाज को अनसुनी करके
डूबते चले जाने के लिये विवश हूं।

मुझे भी दर्द है इस बात का
कि यह दुनियां इतनी बदसूरत है,
तुम समझते हो कि मैं इस वजह से भाग रहा हूं,
पर मैं अपने ही भीतर उतर कर जानना चाहता हूं
कि सौन्दर्य क्या है ?
क्योंकि इसके अतिरिक्त और कोई भी उपाय नहीं है
कि यह दुनियां अच्छी हो सके।
तुम मुझे स्वरों की अर्थहीन भीड़ में
लौट आने के लिये मत बुलाओ,
अभी मुझे अपने ही भीतर कोई संगीत खोजने दो।
मेरी चुप्पी—
महज इस शोरगुल की प्रतिक्रिया नहीं
किसी अन्तर्लय की विधायक भनक से प्रेरित है।
मैं नियति के हाथों मिटने से पहले
स्वयं ही मिट कर देख लेना चाहता हूं
कि जीवन किसे कहते हैं ?
तुम मुझे मौत के अन्तहीन भंवर में
चकित होने के लिये विवश मत करो।
माना कि मैं अकेला और असुरक्षित हूं,
पर मैं जान गया हूं कि
तुम्हारी कोई सुरक्षा मेरा कवच नहीं बन सकती।
अभी इतनी तेज प्यास है
कि महा समुद्र हो तो गटक जाऊं,
तुम मुझे
मरुस्थल की मृग-मारीचिकाओं का प्रलोभन मत दो।
सुना है मैंने कि
गन्तव्य तक पहुंचकर लौट आना बहुत कठिन है,
पर उससे भी अधिक कठिन है—
चारों ओर बिखरे दर्द को देख कर
चुपचाप सह जाना।

□ □ □

तुम्हें मैं अजीब सा लगता हूं,
क्योंकि मेरी तस्वीर
तुम्हारी धारणा की किसी फ्रेम में नहीं बैठ पाती है;
पर तुम्हें कैसे बताऊं
कि मैं कितना सहज होने लगा हूं—
अपनी ही अन्तर्धारा में लीन होकर।
यह सहजता ही मेरा आनन्द है
जो तुम्हारे किसी फीते से नहीं नापा जा सकता।
तुम मुझे पागल कह सकते हो
मेरी उपेक्षा कर सकते हो,
क्योंकि मैंने समाज के दिये हुए वस्त्रों को
पहनने से इन्कार कर दिया है,
पर तुम नहीं समझ सकते
कि कोई अपनी नग्नता में भी कितना खिला रह सकता है!
काश! तुम यह समझ पाते कि
अनुभव की क्यारी में उगे व्यक्तित्व के फूल ही
आनन्द की सुगन्ध बिखेर पाते हैं
और इस एक सुगन्ध के अलावा
और कोई सुगन्ध नहीं होती।

□

स्वामी योग प्रीतम
प्राध्यापक : हिन्दी-विभाग
गवर्न्मेन्ट कॉलेज
भीलवाड़ा (राजस्थान)

नारी का अनूठा आदर्श द्रौपदी

★

○ *भगवान रजनीश*

▽

[प्रथम गीता-ज्ञान-यज्ञ, अहमदाबाद, गुजरात में गीता, अध्याय १ और २ पर भगवान श्री के १८ प्रवचन, २९ नवम्बर, १९७० से ७ दिसम्बर १९७० तक हुए हैं। बहु-प्रतीक्षित इस पुस्तक की छपाई तेजी से चल रही है। ५८० पृष्ठों की यह पुस्तक "गीता-दर्शन" (अध्याय १ और २) माह दिसम्बर १९७३ में तैयार हो जाने वाली है।

यह पुस्तक 'नव-संन्यास-अंतर्राष्ट्रीय' बम्बई के खुद के प्रेस में छपने वाली पहली हिन्दी पुस्तक होगी।

निम्नांकित अंश एक झलक के रूप में आपके सामने प्रस्तुत है।

उपरोक्त पुस्तक को मंगाने के लिए सीधे इस पते पर पत्र डालें :

'नव-संन्यास-अन्तर्राष्ट्रीय'
द्वारा : सेल प्रिन्ट, २४९, ए-जेड,
इन्डस्ट्रियल एस्टेट, फर्गुसन रोड,
लोअर परेल, बम्बई–१३

—संपादक]

△

एक सुबह एक मित्र आये। उन्होंने एक बहुत बढ़िया सवाल उठाया। मैं तो चला गया, शायद परसों मैंने कहीं कहा कि एक छोटे-से मजाक से महाभारत पैदा हुआ। एक छोटे-से व्यंग से द्रौपदी के, महाभारत पैदा हुआ। छोटा-सा व्यंग द्रौपदी का ही, दुर्योधन के मन में तीर की तरह चुभ गया और द्रौपदी नग्न की गयी, ऐसा मैंने कहा। मैं तो चला गया। उस मित्र के मन में बहुत तूफान आ गया होगा। हमारे मन भी तो बहुत छोटे-छोटे प्यालियों जैसे हैं, जिनमें बहुत छोटे से हवा के झोंके से तूफान आ जाता है—चाय की प्याली से ज्यादा नहीं है हमारा मन! तूफान आ गया होगा।

मैं तो चला गया, तो वे मंच पर चढ़ आये होंगे। उन्होंने कहा, 'आ खोटी बात छे।' यह बिलकुल झूठी बात है। द्रौपदी कभी नग्न नहीं की गयी।

द्रौपदी पूरी तरह नग्न की गयी, हुई नहीं, यह बिलकुल दूसरी बात है। करने वालों ने कोई कोर-कसर न छोड़ी। करने वालों ने सारी ताकत लगा दी, लेकिन फल आया नहीं। किये हुए के अनुकूल नहीं आया फल, यह दूसरी बात है। असल में जो द्रौपदी को नग्न करना चाहते थे, उन्होंने क्या रख छोड़ा था? उनकी तरफ से कोई कोर-कसर न थी। लेकिन हम सभी कर्म करने वालों को, अज्ञात भी बीच में उतर आता है, इसका कभी कोई पता नहीं है। वह जो कृष्ण की कथा है, वह अज्ञात के उतरने की कथा है। अज्ञात के भी हाथ हैं, जो हमें दिखायी नहीं पड़ते।

हम ही नहीं हैं, इस पृथ्वी पर। मैं अकेला नहीं हूं। मेरी अकेली आकांक्षा नहीं है, अनन्त आकांक्षाएं हैं। और अनन्त की भी आकांक्षाएं हैं। और उन सबके गणित पर अंततः तय होगा कि क्या हुआ। अकेला दुर्योधन ही नहीं है नग्न करने में, द्रौपदी का भी तो अस्तित्व है। अन्याय होगा यह कि द्रौपदी भरी सभा में जबरदस्ती नग्न की जाय। उसके पास भी चेतना है और व्यक्ति है। उसके पास भी संकल्प है। साधारण स्त्री नहीं है द्रौपदी। सच तो यह है कि द्रौपदी के मुकाबले की स्त्री पूरे विश्व के इतिहास में दूसरी नहीं है।

कठिन लगेगी बात, क्योंकि याद आती है अन्य श्रेष्ठ महिलाओं की। और भी बहुत यादें हैं। फिर भी मैं कहता हूं, द्रौपदी का कोई मुकाबला नहीं। द्रोपदी अद्वितीय है। उसमें क्लियोपेट्रा का सौन्दर्य तो है ही,

गार्गी का तर्क भी है। असल में पूरे महाभारत की धुरी द्रौपदी है। सारा युद्ध उसके आस-पास हुआ है।

लेकिन चूंकि कथाएं पुरुष लिखते हैं, इसलिए कथाओं में पुरुष-पात्र बहुत उभर कर दिखायी पड़ते हैं। असल में दुनिया की महाकथा स्त्री की धुरी के बिना नहीं चलती। सब महाकथाएं स्त्री की धुरी पर घटित होती हैं। वह बड़ी रामायण सीता की धुरी पर घटित हुई है। उसके केन्द्र में सीता हैं। राम और रावण 'ट्राएंगल' के दो छोर हैं। धुरी पर सीता हैं।

कौरव और पाण्डव, यह पूरा महाभारत और यह सारा युद्ध द्रौपदी की धुरी पर घटा है। उस युग की और सारे युगों की सुन्दरतम स्त्री है वह। नहीं, आश्चर्य नहीं है कि दुर्योधन ने भी उसे चाहा हो। उसका अस्तित्व उसके प्रति चाह पैदा करने वाला था। दुर्योधन ने भी उसे चाहा है और फिर वह चली गयी अर्जुन के हाथ।

यह भी बड़े मजे की बात है कि द्रौपदी को पांच भाइयों में बांटना पड़ा। कहानी बड़ी सरल है, उतनी सरल घटना नहीं हो सकती। कहानी तो इतनी ही सरल है कि अर्जुन ने आकर बाहर से कहा कि मां, देखो हम क्या ले आये हैं? और मां ने कहा, जो ले आये हो, वह पांचों भाई बांट लो। लेकिन इतनी सरल घटना हो नहीं सकती। क्योंकि जब बाद में मां को भी पता चला होगा कि यह मामला वस्तु का नहीं, स्त्री का है! वह कैसे बांटी जा सकती है? तो कौन-सी कठिनाई थी कि कुन्ती कह देती कि भूल हुई, मुझे क्या पता कि तुम पत्नी ले आये हो!

नहीं, लेकिन मैं जानता हूं कि जो संघर्ष दुर्योधन और अर्जुन के बीच होता, वह संघर्ष पांच भाइयों के बीच भी हो सकता था। द्रौपदी ऐसी थी, वह पांच भाई भी कट-मर सकते थे उसके लिए। उसे बांट देना ही सुगमतम राजनीति थी। वह घर भी कट सकता था। वह महायुद्ध, जो पीछे कौरवों-पाण्डवों में हुआ, वह पाण्डवों-पाण्डवों में भी हो सकता था। इसलिए कहानी मेरे लिए उतनी सरल नहीं है। कहानी बहुत प्रतीकात्मक और गहरी है। वह यह खबर देती है कि स्त्री वह ऐसी थी कि पांच भाई भी लड़ जाते। इतनी गुणी थी, साधारण नहीं थी, असाधारण थी। उसको नग्न करना आसान बात न थी। आग से खेलना था। तो अकेला दुर्योधन नहीं है कि नग्न कर लेगा। द्रौपदी भी है। और ध्यान रहे, बहुत बातें हैं इसमें, जो ख्याल में

ले लेने जैसी हैं।

जब तक कोई स्त्री स्वयं नग्न न होना चाहे, तब तक इस जगत् में कोई पुरुष किसी स्त्री को नग्न नहीं कर सकता। कर पाता है, वस्त्र उतार भी ले तो भी नग्न नहीं कर सकता है। नग्न होना बड़ी घटना है—वस्त्र उतरने, निर्वस्त्र होने से नग्न होना बहुत भिन्न घटना है। निर्वस्त्र करना बहुत कठिन बात नहीं है, कोई भी कर सकता है, लेकिन नग्न करना बहुत दूसरी बात है। नग्न तो कोई स्त्री तभी होती है, जब वह किसी के प्रति खुलती है स्वयं, अन्यथा नहीं होती। वह ढंकी ही रह जाती है। उसके वस्त्र छीने जा सकते हैं, लेकिन वस्त्र छीनना स्त्री को नग्न करना नहीं है।

दौपदी जैसी स्त्री को नहीं पा सका दुर्योधन। उसके व्यंग तीखे पड़ गये उसके मन पर। बड़ा हारा हुआ है। हारा हुआ व्यक्ति—जैसे कि क्रोध में आयी हुई बिल्लियां खम्भे नोचने लगती हैं—वैसा करने लगता है। और स्त्री के सामने जब भी पुरुष हारता है, इससे बड़ी हार पुरुष की कभी नहीं होती। पुरुष, पुरुष से लड़ ले, तो साधारण हार जीत होती है। लेकिन पुरुष जब स्त्री से हारता है किसी क्षण में, तो इससे बड़ी कोई हार नहीं होती। दुर्योधन उन दिनों से नग्न करने का जितना आयोजन करके बैठा है वह सारा आयोजन भी हारे हुए पुरुष-मन का है।

उस तरफ जो स्त्री खड़ी है हंसने वाली, वह कोई साधारण स्त्री नहीं है। उसका भी अपना संकल्प है, अपना 'विल' है। उसकी भी अपनी सामर्थ्य है, उसकी भी अपनी श्रद्धा है। उसका भी अपना होना है। उसकी उस श्रद्धा में, वह जो कथा है, वह कथा तो काव्य है कि कृष्ण उसकी साड़ी को बढ़ाये चले जाते हैं। लेकिन मतलब सिर्फ इतना है कि जिसके पास अपना संकल्प है, उसे परमात्मा का सारा संकल्प तत्काल उपलब्ध हो जाता है। तो अगर परमात्मा के हाथ उसको मिल जाते हैं, तो कोई आश्चर्य नहीं।

मैंने कहा, और मैं फिर से कहता हूं कि द्रौपदी नग्न की गयी, लेकिन हुई नहीं। नग्न करना बहुत आसान है, उसका हो जाना और बहुत बात है। बीच में अज्ञात विधि आ गयी, बीच में अज्ञात कारण आ गये। दुर्योधन ने जो चाहा, वह हुआ नहीं। कर्म का अधिकार था, फल का अधिकार नहीं था। यह द्रौपदी बहुत अनूठी है।

पूरा युद्ध हो गया है। भीष्म पड़े हैं शैय्या पर—बाणों की शैय्या पर। और कृष्ण कहते हैं, पाण्डवों को—कि पूछ लो धर्म का राज। और द्रौपदी हंसती है। उसकी हंसी पूरे महाभारत पर छायी है। वह हंसती है कि इनसे पूछते हैं, धर्म का रहस्य! जब मैं नग्न की जा रही थी, तब ये सिर झुकाये बैठे थे। उसका व्यंग बहुत गहरा है। वह इसलिए बहुत असाधारण है। काश! हिन्दुस्तान की स्त्रियों ने द्रौपदी को आदर्श बनाया होता, तो हिन्दुस्तान की स्त्री की शान ही और होती।

लेकिन नहीं, द्रौपदी खो गयी। उसका कोई पता नहीं। खो गयी। एक तो पांच पतियों की पत्नी है, इसलिए मन को पीड़ा होती है। लेकिन एक पति की पत्नी होना कितना मुश्किल है, इसका पता नहीं है। जो पांच पतियों को निभा सकी है, वह साधारण स्त्री नहीं है। असाधारण है, 'सुपर ह्यूमन' है। द्रौपदी अति-मानवीय है, लेकिन 'सुपर ह्यूमन' के अर्थों में। पूरे भारत के इतिहास में द्रौपदी को सिर्फ एक आदमी ने प्रशंसा दी है, और एक ऐसे आदमी ने जो बिलकुल अनपेक्षित है। पूरे भारत के इतिहास में डॉक्टर राम मनोहर लोहिया को छोड़ कर किसी आदमी ने द्रौपदी को सम्मान नहीं दिया है। यह हैरानी की बात है। मेरा तो लोहिया से प्रेम इस बात से हो गया कि पांच हजार साल के इतिहास में एक आदमी तो हुआ, जो द्रौपदी को सबके ऊपर रखने को तैयार है।

●

○

उपरोक्त ग्रन्थ के संपादक
स्वामी योग चिन्मय
बम्बई
द्वारा प्रेषित

अमृत कण

★

(भगवान श्री के
बोध-वचनों से)

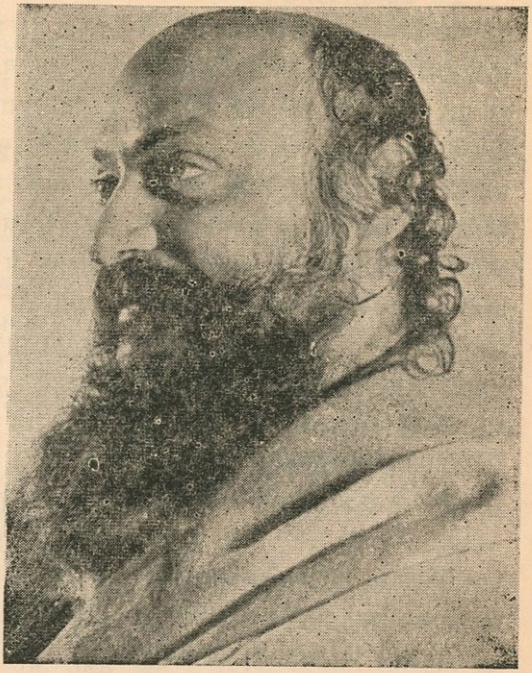

○ प्रभु को पाने की आकांक्षा से भरो तो पाप अपने से छूट जाते हैं और जो पापों से ही लड़ते रहते हैं, वे उनमें ही धंसते जाते हैं। जीवन को विधायक आरोहण दो, निषेधात्मक पलायन नहीं। सफलता का स्वर्ण-सूत्र यही है।

○ मन्दिरों और उपासनागृहों में बैठने का कोई मूल्य नहीं है और तुम्हारे हाथों में ली गई मालाएं झूठी हैं, जब तक कि विचार के यांत्रिक प्रवाह से तुम मुक्त नहीं हो। जो विचार की तरंगों से मुक्त हो जाता है, वह जहां भी है वहीं मंदिर में और उसके हाथ में जो भी कार्य है वही माला है।

○ जीवन के अतिरिक्त और कोई परमात्मा नहीं है।

○ परमात्मा की अभिव्यक्ति है—यह संसार।

○ खोजो मत, जो है : है, रुको और देखो।

○ मरो प्रतिपल ताकि प्रतिपल नये हो सको।

○ किसी की आज्ञा कभी मत मानो, जब तक कि वह स्वयं की आज्ञा न हो।

□ संकलन : *स्वामी आनंद गौतम*, इन्दौर

कृष्ण और गीता

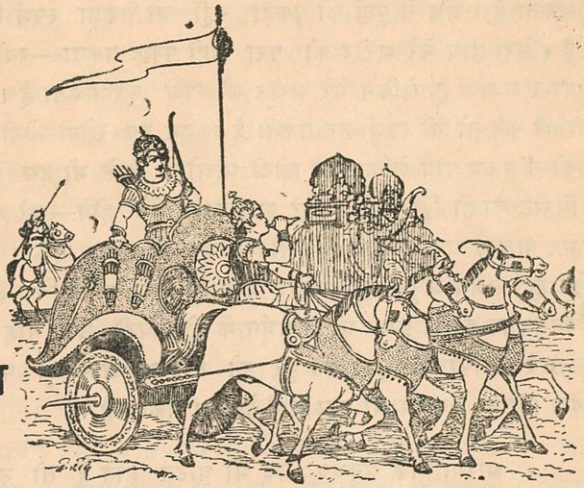

[गीता अध्याय ११ पर भगवान श्री रजनीश जी के ३ जनवरी ७३ से १४ जनवरी ७३ तक—क्रास मैदान, बंबई में १२ प्रवचन हुए हैं। उस क्रम का एक प्रवचन क्रमांक ३रा, श्लोक १२ से १७ के अंश को प्रस्तुत किया गया है।

युक्तांद प्रकाशन का ऐसा प्रयत्न है कि प्रति माह गीता के ११ वें अध्याय का एक-एक प्रवचन दिया जाय, अतः प्रेमी सुविज्ञ साधकों से निवेदन है कि 'युक्तांद' के इन बहुमूल्य अंकों को आप संजो कर रखेंगे तो—वर्ष के अन्त में आपके हाथ में गीता अध्याय ११ पूरा का पूरा हो सकेगा। —सं०]

एक मित्र ने पूछा है कि अर्जुन और कृष्ण के बीच घटी घटना अत्यन्त वैयक्तिक थी : संजय आधा अर्जुन था—उसे दिव्य चक्षु उपलब्ध नहीं थे, फिर संजय अधूरा होकर पूर्ण को कैसे निहार पाया। अंश विराट के दर्शन और वर्णन कैसे कर पाया! संजय का वर्णन क्यों न कल्पना माना जाये?

इस सम्बन्ध में कुछ बातें समझ लेना अत्यन्त उपयोगी है। पहली बात तो ये कि अंश से पूर्ण को पकड़ा नहीं जा सकता लेकिन छुआ जा

सकता है। अंश से पूर्ण को पकड़ा नहीं जा सकता स्पर्श किया जा सकता है। मेरा हाथ मेरे शरीर को पूरा नहीं पकड़ सकता—क्योंकि हाथ शरीर का एक अंश है, लेकिन मेरे शरीर को स्पर्श कर सकता है। पूरे को न भी स्पर्श करे तो भी स्पर्श कर सकता है। हम इन छोटी-छोटी आंखों से विराट को न पकड़ पायें लेकिन इन छोटी आंखों से जिसे भी हम पकड़ते हैं वो भी विराट का ही हिस्सा है। मेरे हाथ बहुत छोटे होंगे—पूरे आकाश को नहीं भर पाऊंगा अपनी बाहों में, लेकिन जिसे भी भर पाऊंगा वो भी आकाश ही है। संजय अधूरा है, इसलिए प्रश्न बिलकुल स्वाभाविक है कि वो अधूरी चेतना का व्यक्ति कृष्ण और अर्जुन के बीच घटी उस महिमापूर्ण घटना को कैसे देख पाया। अधूरा कैसे पूरे को देख पाएगा—देख पायेगा, पूरा नहीं देख पाएगा। संजय भी पूरा नहीं देख पा सकता है।

आध्यात्मिक अनुभव जब भी घटित होते हैं तो उनकी पूरी खबर हम तक नहीं आती और न ही आ सकती है। इसे हम थोड़ा यों समझें : बुद्ध को अनुभव हुआ। बुद्ध स्वयं उस अनुभव को कहते हैं, लेकिन साथ ये भी कहते हैं कि जो भी मैं कह रहा हूं, वो उतना नहीं है जितना मैंने जाना। जो मैंने जाना, वह कहते ही आधा हो गया, क्योंकि शब्द सीमित है और जो जाना था वो असीम था। उस असीम को शब्द में रखते ही वो आधा हो गया। फिर बुद्ध जितना जाने उससे आधा कह पाते हैं और हम सुनते हैं जब तो हम उतना भी नहीं सुन पाते, जितना बुद्ध कहते हैं। क्योंकि सुनने वाले के पास और भी छोटी बुद्धि है, और भी अंधेरे में डूबा हुआ मन है, और भी अविकसित चेतना है। तो बुद्ध जब हमसे बोलते हैं तो जो हम समझ पाते हैं वो उसका भी आधा हो तो बड़े सौभाग्यशाली हैं हम जितना वो कहते हैं। और हम अगर किसी और को कहें तो प्रति पल सत्य छूटता चला जाता है और असत्य होता चला जाता है।

कृष्ण के भीतर जो अर्जुन को दिखाई पड़ा वो पूरा अनुभव है। संजय उसको आधा ही पकड़ पायेगा, और धृतराष्ट्र कितना पकड़ पाए होंगे, इस सम्बन्ध में कुछ भी कहा नहीं जा सकता। तो पहली तो बात ये ख्याल रखनी है कि अधूरा आदमी भी आंख उठा सकता है उस दिशा में। दूसरी बात ये ख्याल में ले लें कि अधूरा आदमी किनारे पर खड़ा हुआ है—आधा उस तरफ, आधा इस तरफ, उसके दो मुंह हैं। एक तरफ वो अन्धे धृतराष्ट्र

की तरफ देख रहा है, दूसरी तरफ वहां महाप्रकाश की जो घटना घटी है, अर्जुन की आंखों का खुल जाना जो हुआ है, उस तरफ। संजय की क्या जरूरत थी बीच में, अर्जुन भी ये खबर बाद में दे सकता था—गीता हमें अर्जुन से भी मिल सकती थी। अर्जुन स मिलनी बहुत कठिन थी, जिसको पूरा अनुभव होता है, जरूरी नहीं है कि वो अभिव्यक्ति में भी कुशल हो। अनुभूति एक बात है, अभिव्यक्ति बिलकुल दूसरी बात है। अर्जुन के पास अभिव्यक्ति नहीं थी, अर्जुन को अनुभव तो हुआ लेकिन वो कह नहीं सकता था। यह हो सकता है कि आप सुबह का सूरज ऊगते हुए देखें लेकिन आप चित्र न बना पायें। क्योंकि चित्र बनाना और बात है। और ये भी हो सकता है कि उस चित्रकार ने जिसने सुबह का सूरज ऊगते न देखा हो, उसको आप जाकर सिर्फ बतायें कि क्या देखा है, वो चित्र आपसे बेहतर बना सके। अर्जुन कहने में असमर्थ था, इसलिए गीता में संजय को लाना अनिवार्य हो गया। बिना संजय के गीता—बिना कही रह जाती। कृष्ण ने उसे अर्जुन से कह दिया था लेकिन अर्जुन उसे हम तक नहीं पहुंचा सकता था। अर्जुन के पास अभिव्यक्ति की कोई क्षमता नहीं है। इसलिए बहुत बार ऐसा हुआ है कि जिन्होंने जाना है वो जानके चुप ही रह गये हैं क्योंकि कहने की उनके पास कोई व्यवस्था न थी। और कई बार ऐसा भी हुआ है कि जिन्होंने नहीं जाना है, उन्होंने भी बहुत बातें हमें समझा दी हैं, उनसे सुनके जिन्होंने जाना था या उनके पास रहके जिन्होंने जाना था। अभी इस सदी में काकेशस में बहुत अद्‌भुत आदमी पैदा हुआ—जार्ज गुरजिएफ। उसने गहनतम अनुभव किया—जो इस सदी में दो-चार लोगों को ही मिला है। लेकिन उसकी कहने की कोई भी योग्यता नहीं थी। न तो वो बोल सकता था, न लिख सकता था। न ही किसी भाषा पर उसका कोई अधिकार था। गुरजिएफ की बात ऐसे ही खो जाती, पर उसे एक बहुत प्रतिभाशाली व्यक्ति पी० डी० आस्पेन्स्की मिल गया। आस्पेन्स्की को कोई अनुभव नहीं था—लेकिन आस्पेन्स्की एक कुशल लेखक था, भाषा पर उसका अधिकार था। गणित पर उसकी पकड़ थी। रूस के बड़े से बड़े गणितज्ञों में एक था। इसलिए किसी भी चीज को तर्क से, जांच से—परख से—ठीक ठीक माप में प्रगट करने की उसकी प्रतिभा थी। आस्पेन्स्की कह सका ये गुरजिएफ नहीं कह सका। और गुरजिएफ जानता था, आस्पेन्स्की नहीं जानता था। आस्पेन्स्की गुरजिएफ के पास रहकर पकड़ सका, वो जो अधूरा-अधूरा, टूटा-

फूटा प्रगट करता था— बिना व्याकरण के, बिना भाषा के। वो जो टटोल टटोलकर कुछ बातें कहता था, आस्पेन्स्की उसे निखार-निखार के प्रगट कर सका। आस्पेन्स्की न हो तो गुरुजिएफ को शिक्षा खो जायेगी। ये संजय के कारण कृष्ण ने जो अर्जुन को कहा था, वो बच सका है।

संजय अधूरा है, लेकिन बड़ा योग्य है। ऐसा कभी-कभी घटता है कि एक ही व्यक्ति में दोनों बात होती हैं। बहुत अनूठा संयोग है। महावीर को अनुभव हुआ महावीर नहीं बोले, बोलने वाले दूसरे लोग उन्होंने इकट्ठे किए। महावीर उनसे मौन में बोले और उन्होंने फिर वाणी से प्रगट किया। बुद्ध को जो अनुभव हुआ, बुद्ध स्वयं बोले। ये बहुत कठिन है।

कभी-कभी ऐसा होता है कि अनुभव को उपलब्ध व्यक्ति अभिव्यक्ति भी कर पाता है अन्यथा सहारे खोजने पड़ते हैं। कोई और सहारा खोजना पड़ता है, संजय इस पूरी व्यवस्था में सहारा है। और संजय ने जो कहा है वो रूपक नहीं है। उसने जो देखा है वही कहा है। लेकिन जिसके लिए कहा है वो अन्धा आदमी है। वो बिना रूपक के नहीं समझ पाएगा, इसलिए रूपक का भी उपयोग किया है। इसे थोड़ा ठीक से समझ लें—जब भी हम बोलते हैं, तब बोलने वाला ही महत्वपूर्ण नहीं है, सुननेवाला भी उतना ही महत्वपूर्ण होता है। हम किसके लिए बोलते हैं, जिसके लिए हम बोलते हैं, वो भी निर्धारक होता है जो बात बोली जाती है। जब दो व्यक्ति बोलते हैं : सुनने वाला—बोलने वाला दोनों ही निर्णायक होते हैं जो बोला जाता है। संजय शून्य में नहीं बोल रहा है, संजय धृतराष्ट्र से बोल रहा है। धृतराष्ट्र जो समझ सकेंगे उस व्यवस्था में बोल रहा है। और इसलिए कल मैंने आपसे कहा कि गीता हमारे लिए उपयोगी है क्योंकि हम अन्धे हैं। और अच्छा हुआ कि संजय धृतराष्ट्र से बोला। अगर वो किसी आंख वाले से बोलता, किसी जानने वाले से बोलता तो पहिली कठिनाई ये थी कि बोलने की कोई जरूरत न थी, क्योंकि जो जान सकता था : आंख वाला था तो खुद ही देख लेता। और जो जानता था : जो देख सकता था, उसके लिए प्रतीक न खोजने पड़ते। इसलिए बहुत बार ये सवाल उठता है कि युद्ध के मैदान पर जहां कि एक-एक पल मुश्किल रहा होगा, इतनी बड़ी गीता कृष्ण ने कैसे कही। जहां एक-एक पल मुश्किल रहा होगा, इतनी बड़ी गीता पूरे १८ अध्याय अर्जुन से कहे होंगे—कितना समय व्यतीत न हुआ होगा! और

युद्ध सब ठप्प पड़ा रहा ? लोग वहां लड़ने को—मरने को उत्सुक होकर आए थे, वहां कोई धर्म-संवाद कोई धर्म-उपदेश सुनने नहीं आए। ये इतनी लम्बी बात कृष्ण ने कही होगी—तो अनेक लोगों को कठिनाई होती है और उनको लगता है कि संक्षिप्त में कही होगी, बाद में लोगों ने विस्तीर्ण कर ली होगी। बहुत सार में इशारा किया होगा, बाद में चीजें जुड़ती चली गई होंगी। नहीं ऐसा नहीं है।

दो-तीन बातें ख्याल में लेना चाहिए। एक तो, समय बहुत प्रकार के हैं। समय एक ही प्रकार का नहीं है। समय अनेक प्रकार के होते हैं। ट्रेन में आप चल रहे हैं, आँख लग गई आपको झपकी आ गई। आप एक लम्बा स्वप्न देखते हैं, स्वप्न इतना लम्बा हो सकता है कि आप छोटे बच्चे थे और स्कूल में पढ़े और बड़े हुए और कालेज में गए और किसी के प्रेम में पड़े और शादी की और आपके बच्चे हो गए और आप बच्चों की शादी कर रहे हैं, बैंड-बाजा बज रहा है—इससे आपकी नींद खुल गई। और आप घड़ी में देखते हैं तो मुश्किल से दो-चार सैकेण्ड ही निकले। दो-चार सैकेण्ड में तो इतनी लम्बी कथा कही भी नहीं जा सकती, जो देख ली है।

अगर आप अपना सपना और किसी को सुनाएं तो उसमें भी आधा घण्टा लगेगा और आपने सुना नहीं है—आप जिए। बच्चे से बड़े हुए, पढ़े-लिखे, प्रेम में गिरे, विवाह किया—बच्चा हुआ, बड़ा हुआ और आप शादी कर रहे हैं। ये सब आप जिए भीतर सपने में और घड़ी में मिनिट-आधा-मिनिट निकला। क्या हुआ ? स्वप्न में समय की व्यवस्था और है। जागने में समय की व्यवस्था और है। जागने में भी समय की व्यवस्था बदलती रहती है, घड़ी में नहीं बदलती, इसलिए हमें भ्रम पैदा होता है। घड़ी में क्यों बदलेगी ? घड़ी तो यन्त्र है—वो अपने हिसाब से घूमती रहती है। साठ मिनिट में घण्टा पूरा हो जाता है, चौबीस घंटे में दिन पूरा हो जाता है—घड़ी घूमती रहती है। लेकिन अगर आप घड़ी और अपने बीच थोड़ा-सा विचार करें तो आपको समझ में आ जाएगा कि आपके भीतर समय एक-सा नहीं रहता। जब आप दुख में होते हैं—समय धीमा जाता हुआ मालूम पड़ता है। जब सफल होते हैं तो समय ऐसा बीत जाता है—कि साल ऐसे बीत जाते हैं कि जैसे पल और जब आप असफल होते हैं तो पल ऐसे बीतते हैं—जैसे वर्ष। कोई मर रहा है प्रियजन, उसके पास आप बैठे हैं, तो

एक घड़ी ऐसी लगती है...कितनी लम्बी ! अगर आपने किसी मरते हुए व्यक्ति के पास रात बिताई हो, तो आपको पता चलेगा कि घड़ी और आपके समय में फर्क है, मरणासन्न व्यक्ति के पास बैठकर रात कटती ही नहीं, और अगर आपको अपनी प्रेयसी, अपना मित्र मिल गया हो अचानक तो रात कब बीत जाती है, पता नहीं चलता। और ऐसा लगता है, जैसे सांझ से एकदम सुबह हो गई—रात बीच में रही ही नहीं। आपका चित्त जब दुख से भरा हो तो समय लम्बा हो जाता है, आपका चित्त जब सुख से भरा हो, तो समय छोटा हो जाता है। जो लोग आनन्द को अनुभव किये हैं; आपको सुख-दुख का अनुभव है—आनन्द का आपको कोई अनुभव नहीं है; सुख में समय छोटा हो जाता है, दुख में बड़ा हो जाता है। जितना ज्यादा दुख होता है, समय उतना ही लम्बा हो जाता है। जितना ज्यादा सुख होता है, उतना ही छोटा हो जाता है। आनन्द है—परम सुख—समय शून्य हो जाता है। समय होता ही नहीं। इसलिये जिन्होंने आनन्द अनुभव किया है, वे कहते हैं—समय वहां होता ही नहीं। और जैसे स्वप्न में, मिनिट-आधा-मिनिट में वर्षों का जीवन व्यतीत हो जाता है, वैसे ही आनन्द के क्षण में कितना ही समय व्यतीत हो सकता है, और बाहर की घड़ी में कुछ भी फर्क न पड़ेगा। कृष्ण और अर्जुन के बीच जो घटना घटी, वो हमारे समय के हिसाब से कितनी ही लम्बी मालूम पड़े, उनके बीच क्षण भर में घट गई होगी। जैसे, दो आंखों का मिलना—हो जायगा, और बस ! संजय को जरूर वक्त लगा बताने में; जैसे आपको अपने स्वप्न बताने में वक्त लगता है। घटते जल्दी हैं; बताने जाते हैं—तो वक्त लगता है। धृतराष्ट्र को समझाने में इतना लम्बा वक्त लगा।

ये जो गीता है, इसके बीच जो समय व्यतीत हुआ, वो संजय और धृतराष्ट्र के बीच व्यतीत हुआ समय है; अर्जुन और कृष्ण के बीच का नहीं। अर्जुन और कृष्ण के बीच तो ऐसे घट गई ये घटना, कि उस युद्ध के स्थल पर मौजूद किसी व्यक्ति को पता ही न चला होगा, कि क्या हो गया ? ये कोई भी जान न सका होगा कि कब हो गई ये बात ? अनुभव पल में हो गया होगा, लेकिन अनुभव इतना विराट था, कि उसे बताते वक्त संजय को बहुत वक्त लगा होगा। इसे ऐसा समझ लें : आपकी तरफ मैं देखूं, तो एक झलक में सबको देख लेता हूं, लेकिन मैं किसी को बताने जाऊं, तो—नम्बर एक पर कौन बैठा था ? नम्बर दो पर कौन बैठा था ? नम्बर तीन पर ?

.. हजारों लोग बैठे थे। उनके नाम—अगर मैं उनका वर्णन करने लगूं, तो मुझे दिनों लग जायेंगे, लेकिन एक झलक में मैं आपको देख लेता हूं, एक पल में आपको देख लेता हूं। अर्जुन ने जो जाना, वो तो एक पलक में हो गया, लेकिन उसने जो जाना था, उसे जब वर्णन करने संजय चला, तो एक-एक टुकड़े में उसे करना पड़ा। उसमें समय लगा। भाषा रेखाबद्ध है, अनुभव मल्टीडायमेंशनल हैं, अनुभव में अनेक आयाम हैं। भाषा एक रेखा में चलती है। तो एक रेखा में जो वर्णन करना पड़ता है, अनेक आयाम में जो अनुभव हुआ था, उसे खंड-खंड में तोड़कर कहना पड़ता है। ये जो गीता हमें इतनी लम्बी मालूम पड़ रही है, ये संजय और धृतराष्ट्र के कारण। ये कृष्ण और अर्जुन के बीच नहीं। लेकिन संजय योग्य था, शायद उस क्षण में संजय से ज्यादा कोई योग्य आदमी नहीं था, जो कृष्ण और अर्जुन के बीच जो घटा, उसे कह सकता। और शायद उस दिन धृतराष्ट्र से ज्यादा योग्य कोई जिज्ञासु नहीं था, जो उससे पूछता।

ये चारों पात्र गीता के—ये एक लिहाज से अद्‌भुत हैं। ये संयोग असंभव संयोग है। कृष्ण जैसा गुरु खोजना बहुत मुश्किल है, अर्जुन जैसा शिष्य खोजना उससे भी ज्यादा मुश्किल। संजय जैसा व्यक्त करने वाला खोजना उससे भी ज्यादा मुश्किल, धृतराष्ट्र जैसा अन्धा जिज्ञासु खोजना उससे भी ज्यादा और मुश्किल, क्योंकि अन्धे जिज्ञासा करते ही नहीं। अन्धे मानते हैं, कि हम जानते हैं। अन्धे जिज्ञासा करते ही नहीं। अन्धे तो मानके ही बैठे हैं कि जानते हैं। उनका ये मानना ही तो उनका अन्धापन है कि हम जानते हैं। आपका अन्धापन क्या है? आपको पता है कि—आपको "पता है", और पता बिल्कुल नहीं। और जिस आदमी को ये ख्याल है कि मुझे मालूम है—बिना मालूम हुए—वो जिज्ञासा क्या करेगा? वो पूछेगा क्यों? वो जानने की उत्सुकता क्यों प्रगट करेगा? उसकी कोई जिज्ञासा नहीं, उसकी कोई खोज नहीं। और जो ये माने ही बैठा है कि मैं जानता हूं, वो कभी भी नहीं जान पायेगा। क्योंकि जानने के लिए जो पहला कदम है—वो जिज्ञासा है। धृतराष्ट्र—अन्धे धृतराष्ट्र ने पूछा, ये बड़ी बात है। जो बता सकता था संजय, उसने बताया; जिसको ये घटना घट सकती थी—अर्जुन—उसे ये घटना घटी, जो उस घटना के लिये कैटेलिटिक एजेंट हो सकता था—कृष्ण, वे हो गए। गीता एक अर्थ में श्रेष्ठतम संयोगों का जोड़ है। फिर ये भी ध्यान रखें कि अधूरा आदमी ही बता सकता है, क्योंकि

पूर्ण आदमी संसार की तरफ से पूरा मुड़ जाता है, फिर बड़ी कठिनाई है।

आधा आदमी आधा संसार की तरफ भी होता है, आधा परमात्मा की तरफ भी होता है। उधर की भी उसके पास झलक होती है, और इधर संसार में खड़े लोगों की पीड़ा का भी उसे बोध होता है।

जब बुद्ध को ज्ञान हुआ, तो कथा है कि सात दिन तक वे बोले ही नहीं। क्योंकि बुद्ध का मुख फिर गया, पूरा का पूरा सत्य की तरफ, वे मौन हो गये, वे संसार को भूल ही गये, उन्हें पता ही न रहा कि पीछे अनंत-अनंत लोग पीड़ा से परेशान—इसी सत्य की खोज के लिये रो रहे हैं। वे भूल ही गये। बड़ी मीठी कथा है, कि देवताओं ने आके बड़ा शोरगुल किया, बहुत बैंड-बाजे बजाये। उनका मौन तोड़ने की कोशिश की। उनको हिलाया-डुलाया, उन्हें काफी डांवांडोल किया, ताकि उन्हें ख्याल आ जाये, कि पीछे एक बड़ा संसार भी है, जिसके लिये उन्हें अभी बात कह देनी है। बुद्ध को देवताओं ने कहा, कि आप चुप क्यों हो गये हैं? अनंत-अनंत युगों के बाद कभी कोई व्यक्ति इस परम अनुभव को उपलब्ध होता है, लाखों लोग प्यासे हैं, आप उनसे कहें। बुद्ध ने कहा: जो समझ सकते हैं उस अनुभव को, वो मेरे कहे बगैर भी समझ जायेंगे, और जो नहीं समझ सकते, उनके सामने मैं सिर पटकता रहूं तो भी वे समझने वाले नहीं हैं, तो मुझे क्यों परेशान करते हो? बुद्ध ने कहा: मुझे छोड़ो, मेरा बोलने का कोई भी मन नहीं, फिर जो मैंने जाना है, वो बोला भी नहीं जा सकता, और जो मैं बोलूंगा, वो वही नहीं होगा, जो मुझे घटा है। शब्द में उसे मैं बांध न सकूंगा। और फिर जो नहीं समझेंगे, वे नहीं ही समझेंगे, और जो समझ सकते हैं, वे मेरे बिना भी देर अबेर, पहुंच ही जायेंगे। इससे मैं क्यों परेशान होऊं? कुशल लोग थे वे देवता, उन्होंने बुद्ध को किसी तरह राजी कर ही लिया, और राजी इस तरह किया, बुद्ध को; उन्होंने कहा कि आप बिल्कुल ठीक कहते हैं, जो समझ सकते हैं, वे आपके बिना भी समझ जायेंगे। जो बिल्कुल नासमझ हैं, आप उनके सामने जिन्दगी भर सिर पटकते रहें, तो भी वे न समझेंगे, या कुछ समझेंगे भी तो वो, जो आपने कहा ही नहीं। मगर इन दोनों के बीच में भी कुछ लोग हैं, जो अधूरे खड़े हैं। वे नासमझ भी नहीं हैं, वे समझदार भी नहीं हैं। आपके बिना वे समझदार न हो सकेंगे, और आपके बिना वे नासमझ रह जायेंगे, आप उन बीच में खड़े थोड़े से लोगों के

लिये बोलें, जिनके लिये तिनका भी सहारा हो जायेगा।

बुद्ध को कठिन पड़ा उत्तर देना, वे राजी हो गये। संजय अधूरा आदमी है, वो दोनों तरफ देख रहा है। उसे धृतराष्ट्र की पीड़ा भी पता है, उसे अर्जुन का आनंद भी। वो ये भी देख रहा है, कि अर्जुन को क्या घट रहा है? किस परम हर्षोल्लास में उसका रोयां-रोयां नाच रहा है? किस महाप्रकाश में अर्जुन डूबकर खड़ा हो गया है? ये भी, और धृतराष्ट्र का अन्धापन भी। और अन्धेपन में घिरी हुई आत्मा की पीड़ा और नर्क, और अन्धेपन में डूबा हुआ धृतराष्ट्र टटोल रहा है, कहीं कोई रास्ता नहीं मिलता, कहीं कुछ समझ में नहीं आता। उसकी पीड़ा भी उसके ख्याल में है, और अर्जुन का आनन्द भी। वो बीच में खड़ा आदमी है। इसलिये वही ठीक आदमी है, जो खबर दे सकता है। अब हम सूत्र को लें।

और हे राजन्! आकाश में हजार सूर्यों के एक साथ उदय होने से उत्पन्न हुआ जो प्रकाश हो, वह भी उस विश्वरूप परमात्मा के प्रकाश के सदृश कदाचित् ही होवे।

पहला अनुभव उसने कहा ऐश्वर्य का। संजय ने कहा—कि अर्जुन ने देखा, परमात्मा का महिमाशाली ऐश्वर्य रूप, जो सुन्दर है, जो श्रेष्ठ है, जो बहुमूल्य है, वो सब। जगत का जैसे सारा सौन्दर्य निचोड़ लिया हो, और जगत की जैसे सारी सुगन्ध निचोड़ ली हो, और जगत का जैसे सारा प्रेम निचोड़ लिया हो, और सब, इस सार में जो अनुभव हो, वो ऐश्वर्य है परमात्मा का। अर्जुन ने पहले परमात्मा का ऐश्वर्य रूप देखा। दूसरी बात संजय कहता है—कि परमात्मा का प्रकाशरूप देखा। यही उचित है कि ऐश्वर्य के बाद प्रकाश दिखाई पड़े, क्योंकि ऐश्वर्य भी धीमा प्रकाश है। ऐश्वर्य भी धीमा प्रकाश है—जैसे सुबह होती है, रात भी चली गई और अभी दिन भी हुआ नहीं, बीच में जो भोर के क्षण होते हैं, जब धीमा प्रकाश होता है, जो आंख को परेशान नहीं करता, जो आंख को परेशान नहीं करता, जो आंख पर चोट नहीं करता, जिसमें कोई चमक नहीं होती, सिर्फ आभा होती है। या शाम को जब सूरज ढल गया है, और रात अभी उतरी नहीं, और बीच का जो संध्याकाल है, सिर्फ धीमा-सा आलोक रह जाता है। ऐश्वर्य आलोक है, ऐश्वर्य आंखों को तैयार कर देगा अर्जुन की, कि वो

प्रकाश को देख सके—अनूठा परमात्मा का प्रकाश, आंखें बन्द हो जायेंगी। अनूठा परमात्मा का प्रकाश, उस चकाचौंध में होश खो जायेगा।

ऐसा बहुत बार हुआ है। ऐसा बहुत बार हुआ है कि कुछ साधना पद्धतियां हैं, जिनसे व्यक्ति सीधा परमात्मा के प्रकाश-स्वरूप को देख लेता है। वो प्रकाश इतना ज्यादा है, कि सहा नहीं जा सकता और सदा के लिए भीतर घुप्प अंधेरा छा जाता है। ये शायद आपने नहीं सुना होगा। आपको भी ख्याल नहीं होगा, कि अगर आप सूरज की तरफ सीधा देखें कुछ देर, तो फिर सब—कहीं भी देखें—तो घुप्प अंधेरा मालूम पड़ेगा। अगर रात आप रास्ते से गुजर रहे हैं, अंधेरा है, अमावस की रात है, लेकिन फिर भी आपको कुछ कुछ दिखाई पड़ रहा है; फिर पास से एक तेज प्रकाशवाली कार गुजर जाती है, रात और अंधेरी हो जाती है। अभी तक उस रास्ते पर चल रहे थे अब अंधेरा और घना हो जाता है। ईसाई फकीरों ने इस बात के सम्बन्ध में बड़ी-बड़ी महत्वपूर्ण खोजें की हैं। अगस्टीन ने, फ्रांसिस ने, उन्होंने इसे 'डार्क नाइट आफ दी सोल' कहा है—आत्मा की अंधेरी रात। क्योंकि जब प्रकाश का इतना तीव्र आभास होता है, तो सब तरफ अंधेरा छा जाता है। वर्षों लग जाते हैं, कभी-कभी साधक को, वापिस उस अंधेरे से बाहर आने में। इसलिये प्रकाश की सीधी साधना खतरनाक है। जो लोग सूर्य पर एकाग्रता करते हैं, वो इसीलिये कर रहे हैं, ताकि सूर्य पर अभ्यास हो जाये, कि जब वो महासूर्य भीतर प्रकट हो, तो आंखें अन्धी न हो जायें, और अंधेरा न छा जाये। इस सूर्य पर एकाग्रता का अभ्यास इसीलिये सिर्फ कि थोड़ा तो; ये सूर्य कुछ भी नहीं है, लेकिन फिर भी जो कुछ है, काफी है हमारे लिये तो बहुत कुछ है। इससे थोड़ा अभ्यास हो जाये, कि जब महासूर्य . अनंतसूर्य भीतर प्रकाशित हो जायें तो उस वक्त थोड़ी-सी तो तैयारी रहे, इसलिये सूर्य पर एकाग्रता के प्रयोग किये जाते हैं। लेकिन अगर ऐश्वर्य का अनुभव पहले हो, इसलिये हमने भगवान को ईश्वर का नाम दिया है, हम उसके ऐश्वर्यरूप को पहले स्वीकार करते हैं, वो आभा है, और ध्यान रहे, सुबह जब आभा घेर लेती है भोर की और फिर सूर्य निकलता है तो सुबह के सूरज के साथ भी आंखों को मिलाना आसान है वो बाल सूर्य है। और अगर कोई सुबह से ही अभ्यास करता रहे सूर्य के साथ आंखों को मिलाने का, तो दोपहर के सूर्य के साथ भी आंख मिला सकता है। आभा से शुरू करें, बाल-सूर्य से और धीरे-धीरे बढ़ते रहें।

मेरे गांव में मैं एक आदमी को जानता हूं, जो भैंस को पूरा का पूरा उठा लेता था। गांव में वो अजूबा था, कि वो भैंस को पूरा उठा लेता था। मैं पूछताछ किया—उसने बताया, जब से भैंस का छोटा बच्चा हुआ था, तब से मैं उसे रोज उठाके घंटा भर का अभ्यास करता रहा हूं। भैंस का बच्चा धीरे-धीरे बड़ा होता गया, उसका अभ्यास भी साथ-साथ बढ़ता चला गया। अब भी वो पूरी भैंस को उठा लेता है। बाल सूर्य के साथ जो यात्रा शुरू करेगा, वो धीरे से दोपहर का जब प्रौढ़ सूर्य होगा, तब भी आंखें सूर्य से मिला सकेगा, और आंखें अंधेरी न होंगी। "ईश्वर" इसीलिये हमने शब्द चुना है। ऐश्वर्य से शुरू करना, अन्यथा भयंकर अंधेरी रात भी आ सकती है भीतर जो वर्षों चल सकती है, और कभी-कभी जन्मों चल सकती है। सीधे बिना तैयारी के, परमात्मा के प्रकाश रूप के सामने खड़ा होना खतरे से खाली नहीं है। इसलिये ऐश्वर्य के बाद अर्जुन को अनुभव हुआ अनंत-अनंत सूर्य जैसे जनम गये हों।

एक बात समझ लेने जैसी है, आज का विज्ञान भी स्वीकार करता है, कि पदार्थ की जो आंतरिक घटना है, वो पदार्थ नहीं है, प्रकाश ही है। जहां-जहां हम पदार्थ देखते हैं, वो प्रकाश का घनीभूत रूप है (कंडेन्स्ड लाइट) या उसको प्रकाश की किरण कहें, या शक्ति कहें, लेकिन आज विज्ञान अनुभव करता है, कि पदार्थ जैसी कोई भी चीज जगत में नहीं है, सिर्फ प्रकाश है, और प्रकाश ही जब घनीभूत हो जाता है, तो हमें पदार्थ मालूम पड़ता है। विज्ञान के विश्लेषण से पदार्थ का जो अंतिम रूप हमें उपलब्ध हुआ है, वो (इलेक्ट्रान) है। वो विद्युत कण है। विद्युत कण छोटा सूर्य है—अपने आप में पूरा। सूर्य की भांति—प्रकाशोज्जवल। विज्ञान भी इस नतीजे पर पहुंचा है, कि सारा जगत प्रकाश का खेल है। और धर्म तो इस नतीजे पर बहुत पहले से पहुंचा है कि परमात्मा का जो अनुभव है, वस्तुतः वो प्रकाश का अनुभव है, फिर कुरान कितनी ही भिन्न हो गीता से, और गीता कितनी ही भिन्न हो बाइबिल से, लेकिन एक मामले में जगत के सारे शास्त्र सहमत हैं, और वो है—प्रकाश। सारे धर्म एक बात पर सहमत हैं, और वो है प्रकाश की परम अनुभूति। विज्ञान और धर्म दोनों ही एक नतीजे पर पहुंचे, अलग-अलग रास्तों से। विज्ञान पहुंचा है, पदार्थ को तोड़ तोड़कर इस नतीजे पर, कि अंतिम कण-अविभाजनीय कण प्रकाश है, और धर्म पहुंचा है स्वयं के भीतर डूबकर इसी नतीजे पर, कि जब कोई व्यक्ति अपनी पूरी गहराई में

देखता है, तो वहां भी प्रकाश है, और जब इस गहराई से बाहर देखता है, तो सब चीजें विलीन हो जाती हैं, सिर्फ प्रकाश ही रह जाता है। अगर ये सारा जगत प्रकाश रह जाये, तो निश्चित ही जैसे हजारों सूर्य एक साथ उत्पन्न हो गये हों, ऐसा अनुभव होगा। हजार भी सिर्फ एक संख्या है, अनंत सूर्य। अनंत से भी हमें लगता है कि गिने जा सकेंगे, कोई सीमा बनती है। नहीं, कोई सीमा नहीं है। अगर पृथ्वी का एक-एक कण एक-एक सूर्य हो जाये, और है। एक-एक कण सूर्य है, पदार्थ का एक-एक कण विद्युत ऊर्जा है तो जब कोई गहन अनुभव में उतरता है अस्तित्व के तो प्रकाश ही प्रकाश रह जाता है। संजय इसी तरह धृतराष्ट्र से कह रहा है कि हे राजन! पर बेचारे धृतराष्ट्र को क्या समझ आया होगा, उसे तो दिया भी दिखाई नहीं पड़ता, सूर्य तो कल्पना है। हजार सूर्य से भी उसे क्या फर्क पड़ेगा, क्योंकि सूर्य का पता हो, तो हजार गुना भी कर ले। धृतराष्ट्र को क्या समझ में आया होगा? हजार-हजार सूर्य के उत्पन्न होने से जैसा प्रकाश हो, विश्वरूप परमात्मा के प्रकाश के सदृश वह भी कदाचित ही हो पाये। लेकिन धृतराष्ट्र समझ गया होगा शब्द। क्योंकि सूर्य शब्द उसने सुना है। प्रकाश शब्द भी उसने सुना है, हजार शब्द भी उसने सुना है, ये सब शब्द उसकी समझ में आ गये होंगे, लेकिन वो बात जो संजय समझाना चाहता था, वह बिल्कुल समझ में न आयी होगी। यही हम सबकी भी दुर्दशा है, सब शब्द समझ में आ जाते हैं, और जो समझाना चाहा गया है, वो समझ के बाहर रह जाता है। शब्दों को लेकर हम चल पड़ते हैं, संग्रहीत हो जाते हैं शब्द, और उनके भीतर जो कहा गया था, वो हमारे ख्याल में नहीं आता। "ईश्वर" सुन लेते हैं, समझ में आ जाता है। ऐसा लगता है कि समझ गये—ईश्वर कहा। लेकिन क्या कहा गया ईश्वर से? "आत्मा" सुन लिया, कान में पड़ी चोट, पहले भी सुना था, शब्दकोश में अर्थ भी पढ़ा है, समझ गये कि ठीक "आत्मा" कह रहे हैं। लेकिन क्या मतलब है? जब मैं कहता हूं—घोड़ा, तो एक चित्र बनता है आंख में, पर जब मैं कहता हूं—आत्मा तो कुछ भी नहीं होता। सिर्फ शब्द सुनाई पड़ता है। शब्द भ्रांति पैदा कर सकते हैं, क्योंकि शब्द हमारी समझ में आ जाते हैं। इसलिये ध्यान रखना जरूरी है, कि शब्दों की समझ को आप अपनी समझ मत समझ लेना। उसके पार—खोज करते रहना। और जो शब्द सिर्फ सुनाई ही पड़े, और भीतर कोई अनुभव पकड़ में न आये, तो फौरन पूछ लेना कि ये शब्द समझ में तो

आता है, लेकिन अनुभव हमारे भीतर, इसके बाबत कोई भी नहीं है। अनुभव से हमारा कोई अर्थ नहीं निकलता। तब ही आदमी साधक बन पाता है, और नहीं तो शास्त्रीय होकर समाप्त हो जाता है। शास्त्र सिर पर लद जाते हैं, बोझ भारी हो जाता है, आत्मा वगैरह तो कभी नहीं मिलती, शास्त्र ही इकट्ठे होते चले जाते हैं और धीरे धीरे आदमी उन्हीं के नीचे दब जाता है। धृतराष्ट्र ने सुना तो होगा समझा क्या होगा ?

ऐसे आश्चर्यमय रूप को देखते हुए, पांडुपुत्र अर्जुन ने उस काल में अनेक प्रकार से विभक्त हुये, पृथक-पृथक हुये, संपूर्ण जगत को, उस देवों के देव, श्रीकृष्ण भगवान के शरीर में एक जगह स्थित देखा। ये दूसरी बात। ये प्रकाश के अनुभव के बाद ही घटित होती है। ये सारी शृंखला ख्याल में रखना—ऐश्वर्य, प्रकाश, एकता। जब तक हमें जगत में पदार्थ दिखाई पड़ रहा है, तब तक हमें अनेकता दिखाई पड़ेगी।

एक तरफ मिट्टी का ढेर लगा है, एक तरफ सोने का ढेर लगा है, लाख कोई समझाये कि सोना भी मिट्टी है, और लाख हम कहें लेकिन फिर भी भेद दिखाई पड़ता रहेगा। और अगर चुराकर भागने की नौबत आई, तो हम मिट्टी चुराकर भागने वाले नहीं हैं, और यह साधारण आदमी की ही बात नहीं है, जिनको हम समझदार कहें, साधु कहें, महात्मा कहें, वो कितना ही कहते रहें, कि मिट्टी-सोना बराबर, एक है।

एक साधु को मैं जानता हूं, वो बड़े संन्यासी हैं। सोने को हाथ नहीं लगाते, और कहते हैं कि सोना मिट्टी एक है। तो एक दफे मैं उनके आश्रम में ठहरा हुआ था, तो मैंने कहा जब एक ही है, तो फिर मिट्टी को भी हाथ लगाना बन्द कर दो, या फिर सोने को भी हाथ लगाते रहो, चिन्ता क्या है ? वे बोले—सोने को मैं हाथ नहीं लगा सकता, सोना तो मिट्टी है। उन्हें ख्याल भी नहीं आ रहा, कि वे क्या कह रहे हैं, सोना तो मिट्टी है—मैं सोने को हाथ नहीं लगा सकता—वो तो मिट्टी है। ये वो अपने को समझा रहे हैं कि सोना मिट्टी है। फिर फर्क क्या है, मिट्टी से तो कोई भी नहीं डरता। सोने से इतना डर क्या है ? वो डर बता रहा है, कि मिट्टी-मिट्टी है, सोना-सोना है। और सोने को हाथ नहीं लगाते, मिट्टी को तो मजे से लगाते हैं। तब फिर बात एक ही है, कोई सोने को

तिजोड़ी में भर रहा है, क्योंकि वो मान रहा है कि सोना सोना है, मिट्टी मिट्टी है। कोई कह रहा है सोने को हाथ नहीं लगायेंगे। लेकिन दोनों को भेद है। भेद में कोई अन्तर नहीं पड़ा है। कोई अन्तर नहीं पड़ा है। दृष्टि बदल गई है, उल्टा हो गया है रुख, लेकिन भेद कायम है। और मिट्टी सोना हो कैसे सकती है, आपकी आंख में। कितना ही नीति समझायें, कितना ही धर्मशास्त्र समझायें, सोना मिट्टी हो कैसे सकती है? ये तो तभी हो सकती है, जब सोने का परम रूप आपको दिखाई पड़ जाये, और मिट्टी का परम रूप भी आपको दिखाई पड़ जाये। सोना भी प्रकाश है परम रूप में और मिट्टी भी। जब दोनों प्रकाशित हो जायें—सोना भी खो जाये, मिट्टी भी खो जाये, सिर्फ प्रकाश की किरणें ही शेष रह जायें, प्रकाश का एक जाल भर रह जाये, उस दिन ही आपको पता चलता है कि सोना मिट्टी दो नहीं हैं, उसके पहले पता नहीं चलता। ये कोई नैतिक सिद्धांत नहीं है कि सोना मिट्टी एक है, एक आध्यात्मिक अनुभव है।

जगत एक है इसका अनुभव तभी होगा, जब जगत की जो मौलिक इकाई है, उसका हमें पता चल जाये। नहीं तो जगत एक नहीं है। कैसे एक है? कैसे मानियेगा एक? सब चीजें अलग-अलग दिखाई पड़ रही हैं, पत्थर...पत्थर है, सोना...सोना है, मिट्टी...मिट्टी है। वृक्ष.. वृक्ष हैं, आदमी...आदमी हैं। सब अलग हैं, लेकिन अगर सबका जो कांस्टिट्यूएंट; सबको बनाने वाला जो घटक है भीतर, चाहे आदमी के शरीर के कण हों, और चाहे सोने के कण हों, और चाहे मिट्टी के कण हों, वे सभी कण प्रकाश के कण हैं। अगर ये दिखाई पड़ जाये, कि सभी तरफ प्रकाश ही प्रकाश है, तो भेद खो जायेगा। तब वो आदमी ये नहीं कहेगा कि सोना मिट्टी है, और मिट्टी भी सोना है। वो पूछेगा—कहां है मिट्टी? कहां है सोना? वो पूछेगा—प्रकाश ही है, वे सारे भेद कहां? सारे भेद खो गये। प्रकाश के बाद ही अद्वैत का अनुभव होता है प्रकाश के पहले नहीं। जिसको परमप्रकाश का अनुभव हुआ, वही अद्वैत का अनुभव कर पाता है।

संजय ने कहा: एक महाप्रकाश के अनुभव के बाद अर्जुन ने समस्त विभक्त चीजों को, समस्त खंड-खंड, अलग-अलग बंटी हुई चीजों को, एक परमात्मा में, एक ही जगह, एक रूप स्थित देखा। सब एक हो गया। सारे भेद गिर गये। सारी सीमायें जो भिन्नता थीं, वे तिरोहित हो गईं, और

एक असीम सागर रह गया। प्रकाश का ऐसा सागर अनुभव हो जाये, तो अद्वैत का अनुभव हुआ है। अद्वैत कोई सिद्धांत नहीं है। अद्वैत कोई फिलासफी नहीं है। अद्वैत कोई वाद नहीं है कि आप तर्क से समझ लें कि सब एक है। बड़े मजे की बात है, लोग तर्क से समझते रहते हैं, कि सब एक है, और तर्क से सिद्ध करते रहते हैं, कि दो नहीं हैं, एक है। लेकिन उन्हें पता ही नहीं है कि जहां भी तर्क है, वहां दो रहेंगे, एक नहीं हो सकता। तर्क चीजों को बांटता है, जोड़ नहीं सकता। वाद चीजों को बांटता है, एक नहीं कर सकता। विचार खंडित करता है, इकट्ठा नहीं कर सकता। इसलिये अद्वैतवादी—एक रोग है। अद्वैत का अनुभव—एक महाअनुभव है, लेकिन अद्वैतवाद—कोई अद्वैतवादी हो जाये, वो एक तरह का रोग है। वो लड़ रहा है। वो द्वैतवादी को गलत सिद्ध कर रहा है कि तुम गलत हो, मैं सही हूं। लेकिन अगर कोई गलत है, और कोई सही है, तो कम से कम दो तो हो ही गये जगत में—कि कोई गलत, कोई सही। एक का अनुभव उस द्वैतवादी में भी उसी प्रकाश को देखेगा, और द्वैतवादी की वाणी में भी उसी प्रकाश को देखेगा, और द्वैतवादी के सिद्धान्त में भी वही प्रकाश को देखेगा, जो अद्वैतवाद में, अद्वैतवाद की वाणी में, अद्वैतवाद के शब्दों में देखता है। सभी शब्द उसी प्रकाश का रूपांतरण है। सभी सिद्धान्त, सभी शास्त्र, सभी वाद। जिस दिन ऐसे प्रकाश का अनुभव होता है, उस दिन वाद गिर जाता है। उस दिन अनुभव होता है।

संजय ने कहा—इस प्रकाश के अनुभव के बाद अर्जुन ने भगवान के शरीर में, जो-जो चीजें पृथक-पृथक हो गई हैं, उनको एक जगह स्थित देखा, एक हुआ देखा। और इसके अनन्तर वह आश्चर्य से युक्त हुआ, हर्षित रोमों वाला अर्जुन, विश्वरूप परमात्मा को श्रद्धाभक्ति सहित, सिर से प्रणाम करके हाथ जोड़े हुये बोला।

कई बातें ख्याल में ले लेने जैसी हैं। ···और इसके अनन्तर वह आश्चर्य से युक्त हुआ। आश्चर्य हम सभी सोचते हैं, हम सबको होता है। सिर्फ धारणा है हमारी। आश्चर्य बड़ी कीमती घटना है। और तभी होता है आश्चर्य का अनुभव जब हम उसके सामने खड़े होते हैं, जिस जगह हमारी समझ कोई भी कार्य नहीं करती। अगर आपकी समझ काम कर सकती है तो आश्चर्य नहीं है। जल्दी ही आप आश्चर्य को हल कर लेंगे! जल्दी ही

आप कोई उत्तर खोज लेंगे। जल्दी ही आप कोई हिसाब निर्मित कर लेंगे और किसी निष्कर्ष पर पहुंच जायेंगे, और आश्चर्य समाप्त हो जायेगा। आश्चर्य का अर्थ है, जिसके सामने आपकी बुद्धि गिर जाये। जिसके साथ आप बुद्धिगत रूप से कुछ भी न कर सकें। जिसके सामने आते ही आपको पता चले, मेरी बुद्धि तिरोहित हो गई—अब मेरे भीतर कोई बुद्धि नहीं रही। अब मैं विचार नहीं कर सकता, अब विचार करने वाला बचा ही नहीं। जहां बुद्धि तिरोहित हो जाती है, तब हृदय में जो अनुभव होता है—उसका नाम आश्चर्य है। और इस आश्चर्य में आपके सारे रोयें खड़े हो जाते हैं। आपने कभी-कभी रोयें को खड़ा देखा होगा—कभी किसी दुख में, कभी किसी आकस्मिक घटना में, कभी किसी बहुत अचानक आ गये भय की अवस्था में। लेकिन आश्चर्य में आपके रोयें कभी खड़े नहीं हुए। क्योंकि आश्चर्य तो आपने कभी किया ही नहीं। और आज की सदी में तो आश्चर्य बिल्कुल मुश्किल हो गया सभी चीजों के उत्तर पता हो गये हैं। और सभी चीजों का विश्लेषण हमारे पास है, और ऐसी कोई भी चीज नहीं जिसको हम न समझा सकें, इसलिए आश्चर्य का कोई सवाल नहीं है। इसलिए आज की सदी जितनी आश्चर्यशून्य सदी है, मनुष्य जाति के इतिहास में कभी भी नहीं रही। छोटे-छोटे बच्चे थोड़ा-बहुत आश्चर्य करते हैं—थोड़ा-बहुत। क्योंकि अब तो बच्चे भी खोजना मुश्किल है। अब तो बच्चे होते से ही हम उसे बूढ़ा करने में लग जाते हैं। पुरानी सदियां थीं, वो कहती थीं—बूढ़े फिर से बच्चे हो जायें, तो परम अनुभव को उपलब्ध होते हैं। हमारी कोशिश यह है कि बच्चे जितने जल्दी बूढ़े हो जायें, उतनी ही संसार में ठीक से यात्रा हो। तो सब मिलके—शिक्षा, समाज, संस्कार, सब बच्चे को बूढ़ा करते हैं। आपकी नाराजगी क्या है आपके बच्चे से, कि यह जल्दी बूढ़ा क्यों नहीं हो रहा? आप हिसाब-किताब लगा रहे हैं अपनी बही में और बच्चा सीटी बजा रहा है। आप डांट रहे हैं कि बन्द कर। वह नाच रहा है, आप उसको रोक रहे हैं कि विघ्न-बाधा खड़ी मत कर।

आप कर क्या रहे हैं! आप कह रहे हैं, कि तू भी जल्दी मेरे जैसा बूढ़ा हो जा। खाते-बही हाथ में ले ले—हिसाब लगा। नाचना-गाना ये सब क्या कर रहा है? हमारे लिए किसी को यह कह देना कि क्या बचकानी हरकत कर रहे हो, काफी निन्दा का कारण है; बच्चा निन्दित है आज। लेकिन बच्चे में थोड़ा-बहुत आश्चर्य है। हम ज्यादा देर बचने नहीं देंगे।

क्योंकि जैसे-जैसे हम समझदार होते जा रहे हैं, बच्चे की उम्र स्कूल भेजने की कम होती जा रही है। पहले ७ साल में भेजते थे, फिर ५ साल में भेजने लगे, अब ढाई साल में भेजने लगे, और अब रूस में वे कहते हैं, कि ये समय भी बहुत ज्यादा है; इतनी देर रुका नहीं जा सकता। वे कहते हैं : अब बच्चे को—जब वो अपने झूले में झूल रहा है—तब भी बहुत-सी बातों में शिक्षित किया जा सकता है। और उनके विचारक तो और भी आगे गये हैं; वे कहते हैं कि मां के गर्भ में भी बच्चे में बहुत तरह से कंडीशनिंग डाली जा सकती है। और वे संस्कार, जो मां के गर्भ में डाल दिये जायेंगे, वो जीवन पर्यन्त उसका पीछा करेंगे—उनसे फिर बचा नहीं जा सकता। इसका मतलब ये हुआ कि आज नहीं कल, हम गर्भ में ही बच्चे को स्कूल में डाल देंगे। सिखाना शुरू कर देंगे। हम उसको पैदा ही नहीं होने देंगे कि वो आश्चर्य करता हुआ पैदा हो! वो जानकारी लेकर ही पैदा होगा। अभी वो कहते हैं कि आज नहीं कल, जैसे आज हृदय को ट्रांसप्लांट करने के उपाय हो गए : एक आदमी का हृदय खराब हो गया है तो दूसरे आदमी का हृदय डाल दिया जाये। नवीनतम जो विचार है और वो काम में लग गए हैं—इस सदी के पूरा होते-होते पूरा हो जाएगा। वो कहते हैं कि जब एक बूढ़ा आदमी मरता है तो उसकी स्मृति को क्यों मरने दिया जाये—वो ट्रांसप्लांट कर दी जाए। बूढ़ा आदमी मर रहा है, ८० साल का अनुभव और स्मृति वो सब निकाल ली जाए, मरते वक्त जैसे हम हृदय को निकालते हैं, उसके पूरे मस्तिष्क के यंत्र को निकाल लिया जाये और इस छोटे बच्चे में डाल दिया जाये। उनका कहना है कि यह छोटा बच्चा बूढ़ों की सारी स्मृतियों के साथ काम करना शुरू कर देगा। जो बूढ़े ने जाना था, वो इस बच्चे को मुफ्त उपलब्ध हो जाएगा, इसको सीखना नहीं पड़ेगा। और प्रयोग इस पर काफी सफल हैं, इसमें बहुत ज्यादा देर की जरूरत नहीं है। काफी सफल हैं। अगर हम किसी दिन, स्मृति को ट्रांसप्लांट कर सकें तो फिर तो बच्चे जगत में पैदा नहीं होंगे, सिर्फ कम उम्र के बूढ़े, बड़े उम्र के बूढ़े—बस इस तरह के लोग होंगे। अभी-अभी पैदा हुए बूढ़े, नवजात बूढ़े, बहुत देर से टिके बूढ़े, इस तरह के लोग होंगे। आश्चर्य के खिलाफ हम लगे हैं। हम जगत के रहस्य को नष्ट करने में लगे हैं। हमारी चेष्टा यही है कि ऐसी कोई भी चीज न रह जाय जिसके सामने मनुष्य को हतप्रभ होना पड़े। ऐसा कोई सवाल न रहे, जिसका जवाब आदमी के पास न रहे। लेकिन इसका

सबसे घातक परिणाम हुआ है, वो ये कि एक अनूठा अनुभव—आश्चर्य, मनुष्य के जीवन से तिरोहित हो गया है। इसलिए धर्म है रहस्य। और धर्म है : आश्चर्य की खोज।

संजय ने कहा : आश्चर्य से युक्त हुआ। ये अर्जुन कोई साधारण व्यक्ति नहीं था। पूर्ण सुशिक्षित, उस समय की ठीक-ठीक संस्कृति, उस समय जो भी संभावना हो सकती थी शिखर पर होने की, ऐसा व्यक्ति था। इसको आश्चर्य से भर जाना आसान मामला नहीं था। वो तो आश्चर्य से तभी भरा होगा, जब उस विराट के उद्घाटन के समक्ष उसकी क्षुद्र बुद्धि के सभी तंतु टूट गए हों। जब उसकी कुछ भी समझ में नहीं आया हो, और जब उसको लगा होगा कि ये समझ के पार गया। अब मेरा अनुभव, मेरा ज्ञान, मेरी बुद्धि, कोई भी काम नहीं करती। तब उसका रोयां-रोयां खड़ा हो गया होगा। तब वो आश्चर्य से चकित हुआ, आश्चर्य से युक्त हुआ, हर्षित रोमों वाला, उसका रोयां-रोयां आनन्द से नाचने लगा होगा—क्यों? क्योंकि बुद्धि दुख है, और जब तक बुद्धि का साथ है, तब तक दुख से कोई छुटकारा नहीं। बुद्धि दुख की खोज है, इसलिए बुद्धिमान आदमी वो है : जहां दुख हो ही न, वहां भी दुख खोज ले। दुख खोजने की जितनी कुशलता आप में हो, उतने आप बुद्धिमान हैं। करते क्या हैं आप बुद्धि से—थोड़ा समझें। कोई पशु मृत्यु से परेशान नहीं है, मृत्यु की कोई छाया पशु पर नहीं है। मृत्यु आती है, पशु मर जाता है। लेकिन मृत्यु के बाबद सोचता-विचारता नहीं है। आदमी मरेगा तब मरेगा, उसके पहले हजार दफे मरता है। जब भी सड़क पर कोई मरता है, फिर मरेगा। फिर किसी की अर्थी निकली—फिर अपनी अर्थी निकली। फिर मरघट की तरफ ले जाने लगे लोग—राम-राम करते फिर आप मरे—रोज, हर घड़ी। क्या..कारण क्या है? जीवन दिखाई नहीं पड़ता बुद्धि को—मृत्यु दिखाई पड़ती है। जीवन बिल्कुल दिखाई नहीं पड़ता। मेरे पास लोग आते हैं—वो कहते हैं कि जीवन क्या है? जी रहे हैं, अभी जिन्दा हैं, श्वांस लेते हैं, इधर चल के आ रहे हैं—पूछ रहे हैं और पूछते हैं कि जीवन क्या है?

तो अगर जीते जी आपको पता नहीं चला जीवन का, तो फिर कब पता चलेगा—मर के? और आप जी रहे हैं, आपका जीवन है और मुझसे पूछने चले आए हैं? अगर जी के पता नहीं चल रहा है तो मेरे जवाब से

पता चलेगा। नहीं बुद्धि जीवन को देख ही नहीं पाती है, ये तकलीफ है। बुद्धि मौत को देखती है। जब आप स्वस्थ होते हैं तब आप नाचते नहीं। लेकिन जब बीमार होते हैं तो रोते जरूर हैं। ये बड़े मजे की बात है। जब बीमार होते हैं तो रोते हैं लेकिन जब स्वस्थ होते हैं तो कभी आपको नाचते नहीं देखा। बुद्धि सुख को देखती ही नहीं, दुख को ही देखती है। बुद्धि ऐसी है जैसे आपका एक दांत गिर गया है और जीभ उसी-उसी जगह को खोजे जहां दांत गिर गया। और जब तक था, जीभ को उसकी कोई चिन्ता न थी--मिलने की कोई चिन्ता न थी। प्रेम था इस दांत से तो मिल लेना था, लेकिन जब गिर गया तो गड्ढे में जीभ इसको खोजती है। ये बुद्धि है। बुद्धि हमेशा अभाव को खोजती है, आपकी पत्नी है अभी, जब मरेगी तब आपको पता चलेगा थी। फिर आप रोयेंगे कि प्रेम कर लिया होता तो अच्छा था। जो खो जाए वो दिखाई पड़ता है बुद्धि को, जो है, वह बिल्कुल दिखाई नहीं पड़ता। अस्तित्व से बुद्धि का सम्बन्ध ही नहीं होता—अभाव से होता है। जब नहीं होती कोई चीज तब बुद्धि को पता चलता है।

इसकी वजह से जीवन में कई वर्तुल पैदा होते हैं, एक वर्तुल तो ये होता है कि जो हमारे पास नहीं है—वो हमें दिखाई पड़ता है। जब पास आ जाता है, तब दिखाई पड़ना बन्द हो जाता है। तब फिर हमारे पास जो है, वह दिखाई नहीं पड़ता। लोग कहते हैं ये वासना की भूल है, ये वासना की भूल नहीं है—बुद्धि की भूल है। बुद्धि देखती ही खाली जगह को है। अभी जो मकान अथवा कार आपके पास नहीं है, उसकी वजह से दुख उठा रहे हैं। बेटा नहीं है तो उसकी वजह से दुख उठा रहे हैं। जिनके पास है उनको इस सबसे कोई सुख नहीं है। इसे थोड़ा समझें।

जो मकान आपके पास नहीं है, उससे आप दुख पा रहे हैं और जिनके पास है उनसे आप पूछें कि कितना आनंद उठा रहे हैं उससे। वो कोई आनन्द नहीं पा रहा है--वो भी दुख पा रहा है, वो किसी दूसरे मकान से दुख पा रहा है जो उसके पास नहीं है। ये उल्टा दिखाई पड़ेगा लेकिन हम उससे दुखी हैं जो हमारे पास नहीं है और हम उससे बिल्कुल सुखी नहीं हैं—जो पास है।

मैं एक घर में ठहरता था, किसी गांव में। तो जिस घर में ठहरता था उस घर की गृहणी—तीन दिन या चार दिन वर्ष में उनके घर रहता, चार दिन सतत रोती रहती। मैंने उससे पूछा कि बात क्या है? वो बोली

कि जब आप आते हैं तो मुझे ये फिकर हो जाती है कि अब आप चार दिन बाद जायेंगे। जब आप नहीं होते तो मैं साल भर आपके लिए रोती हूं, राह देखती हूं और जब आप होते हैं तो लगने लगता है कि अब चार दिन बीते—आप जायेंगे। ये स्त्री बुद्धिमान है। मेरे चार दिन वहां रहने पर आनन्दित नहीं हो पाती, वो चार दिन भी दुख का ही कारण है; क्योंकि बुद्धि सिर्फ दुख को ही खोजती है। अगर वो निर्बुद्धि हो सके तो हालत उल्टी हो जाएगी। जब मैं उसके घर रहूंगा तो वो आनंदित हो जाएगी—नाचेगी कि मैं उसके घर हूं और जब मैं वर्ष भर उसके घर नहीं रहूंगा तब वो आनंद से प्रतीक्षा करेगी कि अब मैं आता हूं। लेकिन इसके लिए निर्बुद्धि होना पड़े, बुद्धिमान ये काम नहीं कर सकता। बुद्धि को तलाश ही अभाव की तलाश है—अस्तित्व की तलाश नहीं है।

अर्जुन की बुद्धिगिरी होगी तो आश्चर्य से भर गया, उसका रोयां-रोयां हर्ष से कंपित होने लगा, रोयां-रोयां, ध्यान रहे जब अनुभव घटित होता है तो वो आत्मा में नहीं होता वो शरीर के रोयें-रोयें में फैल जाता है। इसलिए आत्मिक अनुभव में शरीर समाविष्ट है। आप ये मत सोचना कि आत्मिक अनुभव कोई भूत-प्रेत जैसा अनुभव है जिसमें शरीर का कोई समावेश नहीं होता। और आप ये भी मत सोचना कि शरीर के जो अनुभव हैं वो सभी अनात्मिक हैं—शरीर का अनुभव भी इतना गहरा जा सकता है कि आत्मा खो जाए। और आत्मिक अनुभव भी इतना बाहर तक आ सकता है कि शरीर का रोआं रोआं पुलकित हो जाये। दोनों तरफ से यात्रा हो सकती है। आप शरीर के अनुभव को इतना गहरा कर ले सकते हैं कि शरीर की सीमा के पार आत्मा की सीमा में प्रवेश हो जाए। योग शरीर से शुरू करता है और भीतर की तरफ ले जाता है। भक्ति भीतर की तरफ से शुरू करती है और बाहर की तरफ ले जाती है। बाहर और भीतर दो चीजों के नाम नहीं हैं—एक ही चीज के दो छोर हैं। इसलिए जो भी घटित होता है, वो पूरे प्राणों में स्पंदित होता है। ईश्वर का अनुभव भी रोयें-रोयें तक स्पंदित होता है।

स्वामी राम अमरीका से लौटे, वो राम का जप करते रहते थे। सरदार पूर्णसिंह उनके भक्त थे और उनके साथ रहते थे। एक रात—अंधेरी रात में अचानक पूर्णसिंह ने राम-राम की आवाज सुनी, पास ही सोते थे दोनों, एक

छोटे से झोपड़े में एक ही कमरा था। कोई और तो था नहीं, स्वामी राम सोये थे। सरदार उठे, दिया जलाया, कौन आ गया यहां— राम सोये हुए थे। पूर्णसिंह बाहर गए, झोपड़ी का पूरा चक्कर लगा आए, कोई भी नहीं वहां— लेकिन आवाज आ रही थी। बाहर जाके अनुभव में आया कि आवाज तो कमरे के भीतर से आ रही थी, वो बाहर से नहीं आ रही थी—भीतर से आ रही थी। राम सोये थे, वहाँ कोई और तो है नहीं। राम के पास गए—जैसे-जैसे पास गए आवाज बढ़ने लगी। राम के हाथ और पैरों के पास कान लगाकर सुना—राम की आवाज आ रही थी। घबड़ा गए—क्या हो रहा है, जगाया राम को, ये क्या हो रहा है। राम ने कहा : आज जप पूरा हो गया। जब तक रोआं-रोआं जप न करने लगे, तब तक अधूरा है। आज राम मेरे शरीर तक में प्रवेश कर गया। आज रोआं रोआं भी बोलने लगा और कंपित हुआ। जब परम अनुभव घटित होता है तो रोयें-रोयें तक व्याप्त हो जाता है। शरीर भी पवित्र हो जाता है आत्मा के अनुभव में। और जब तक शरीर भी पवित्र न हो जाए आत्मा के अनुभव में समझना कि अनुभव अधूरा है। जब तक शरीर भी पवित्र न हो जाए तब तक समझना अधूरा है। ये संजय कह रहा है कि रोयां-रोयां हर्षित हो गया अर्जुन का और अर्जुन विश्वरूप परमात्मा को श्रद्धा भक्ति सहित सिर से प्रणाम करके हाथ जोड़े हुए बोला। इसमें फिर भाषा की कठिनाई है, ऐसे क्षण में हाथ जोड़े नहीं जाते, जुड़ जाते हैं। ये कोई अर्जुन ने हाथ जोड़े होंगे, जैसा हाथ जोड़ते हैं कि गुरुजी आ रहे हैं—हाथ जोड़ो, न जोड़ेंगे तो बुरा मान जायेंगे और फिर कर्त्तव्य भी है और संस्कार भी है और फिर हाथ जोड़ने से अपना बिगड़ेगा भी क्या : कुछ मिलता होगा तो मिल जाएगा। आपके हाथ जोड़ना भी व्यवसाय है और चेष्टा है। आप न जोड़ें तो हाथ जुड़ेंगे नहीं, आपको जोड़ना पड़ते हैं। अर्जुन को इस क्षण में जोड़ना पड़े नहीं होंगे, जुड़ गए होंगे। उसे पता ही न रहा होगा, हाथ जुड़ गए होंगे—सिर झुक गया होगा। इसीलिए मैं कहता हूं कि भाषा की भूल है संजय समझा रहा था, भाषा की तकलीफ है, उसको कहना पड़ रहा है अर्जुन ने हाथ जोड़े, श्रद्धा-भक्ति से भरकर सिर झुकाया। नहीं, न तो हाथ जोड़े, न श्रद्धा-भक्ति से भरके सिर झुकाया, श्रद्धा-भक्ति से भर गया— ये घटना है, इसमें कोई श्रम नहीं है। आप भी श्रद्धा-भक्ति से भरते हैं, भरने का मतलब होता है कि आप चेष्टा करते हैं, तो श्रद्धा-भक्ति से भरे मंदिर में जाते हैं, श्रद्धा-भक्ति से भरके सिर झुकाते हैं : सब झूठा होता है, सब

अभिनय होता है। नहीं तो, कोई श्रद्धा-भक्ति से चेष्टा से कोई कैसे भर सकता है या तो भीतर से बहती हो और न बहती हो तो कैसे भरियेगा, अभिनय कर सकते हैं। देखिए मंदिर में खड़े आदमी को और उसी आदमी को मंदिर के बाहर सीढ़ियों से उतरते देखिए और उसी आदमी को दुकान पर बैठे हुए देखिए, आप पायेंगे कि तीनों आदमी अलग हैं—एक ही आदमी मालूम नहीं पड़ता। यही आदमी मंदिर में सिर झुका के खड़ा था—कैसी श्रद्धा-भक्ति से भरा हुआ, लेकिन ये श्रद्धा-भक्ति को मन्दिर में ही छोड़ आता है। और मंदिर में केवल वही श्रद्धा-भक्ति छोड़ी जा सकती है जो रही ही न हो।

जो रही हो तो छोड़ी नहीं जा सकती, श्रद्धा भक्ति कोई जूते की तरह नहीं है कि उतार दिया, प्राण है। अर्जुन को जब इस क्षण में इतने आश्चर्य का अनुभव हुआ और जब वह प्रकाश से भर गया, आच्छादित हो गया तो श्रद्धा भक्ति करनी नहीं पड़ी, हो गई। इसलिए मैं निरंतर कहता हूं कि गुरु वो नहीं है जिसको आपको प्रणाम करना पड़े, गुरु वो है जिसके सान्निध्य में प्रणाम हो जाए। आपको करना पड़े तो कोई मूल्य नहीं है, हो जाये। अचानक आप पायें कि आप प्रणाम कर रहे हैं। अचानक आप पायें कि आप झुक गए हैं।

मैं एक विश्व-विद्यालय में था, वहां शिक्षकों में, सारी दुनिया में शिक्षकों को एक ही चिन्ता है कि विद्यार्थीगण आदर नहीं देते, अनुशासन नहीं है। तो विश्व-विद्यालय के सारे शिक्षकों ने एक समिति बुलाई थी विचार के लिए, भूल से मुझे भी बुला लिया। वे भारी चिन्ता में पड़े थे कि अनुशासन नहीं है, श्रद्धा खो गई है और गुरु का आदर हमारे देश में तो कम से कम होना ही चाहिए। तो मैंने उनसे पूछा कि मुझे एक व्याख्या पहले साफ-साफ समझा दें कि गुरु को आदर देना चाहिए—ऐसा अगर मानते हैं तो इसका अर्थ ये हुआ कि आदर देने के लिए विद्यार्थी स्वतन्त्र है। दे तो दे, न दे तो न दे। और अगर आप ऐसा मानते हैं कि गुरु है ही वही जिसको आदर दिया जाता है तो विद्यार्थी स्वतन्त्र नहीं रह जाता। मेरी दृष्टि में तो गुरु वही है जिसे आदर सहज दिया जाता है। अगर विद्यार्थी आदर न दे रहे हों, बजाय इस चिन्ता में पड़ने के कि विद्यार्थी कैसे आदर दें, हमें इस चिन्ता में पड़ना चाहिए कि गुरु हैं या नहीं हैं। गुरु खो गए हैं। गुरु हो और आदर न हो ये असंभव है। आदर न मिले तो यही सम्भव है कि गुरु

वहां मौजूद नहीं है। गुरु का अर्थ ही यह है कि जिसके पास जाकर श्रद्धा-भक्ति पैदा हो, जिसके पास झुकके लगे कि भर गए, जिसके पास झुकके लगे कि कुछ पा लिया। कहीं कोई हृदय तक भीतर स्पंदित हो गई कोई लहर। अर्जुन झुक गया। श्रद्धा-भक्ति उसने अनुभव की। हाथ उसके जुड़ गए, सिर उसका झुक गया। और बोला : हे देव ! आपके शरीर में सम्पूर्ण देवों को तथा अनेक भूतों के समुदायों को और कमल के आसन पर बैठे हुए ब्रह्मा को तथा महादेव को और सम्पूर्ण ऋषियों को तथा दिव्य सर्पों को देखता हूं। और हे सम्पूर्ण विश्व के स्वामिन् ! आपको अनेक हाथ, पेट, मुख और नेत्रों से युक्त तथा सब ओर से अनन्त रूपों वाला देखता हूं। हे विश्वरूप ! आपके न तो अन्त को देखता हूं तथा न मध्य को और न आदि को ही देखता हूं। और हे विष्णु ! आपको मैं मुकुटयुक्त, गदायुक्त और चक्रयुक्त तथा सब ओर से प्रकाशमान तेज का पुन्ज, प्रज्ज्वलित अग्नि और सूर्य के सदृश ज्योतियुक्त, देखने में अतिगहन और अप्रमेयस्वरूप सब ओर से देखता हूं।

अर्जुन जो कह रहा है वह बिल्कुल अस्त-व्यस्त हो गया है। ये जो वचन हैं उसके होश में कहे गए नहीं हैं, जैसे कोई बेहोश है, शराब पी ले, मदहोश हो जाए फिर कुछ कहे। उसकी वाणी में सब अस्त-व्यस्त हो जाए और वो जो कहना चाहे कह न सके और जो कहे उसकी अभिव्यक्ति न हो, साधारण शराब में ऐसा हो जाता है जिससे हम परिचित हैं। और जिस शराब में अर्जुन उस क्षण में डूब गया होगा जिस हर्षोन्माद में, भगवत्-रस में वहां होश खो गया मालूम होता है। वो जो कह रहा है ऐसा जैसा छोटा बच्चा। कहता चला जाता है और फिर अनुभव करता है कि जो मैं कह रहा हूं और जो मैं देख रहा हूं उसमें संगति नहीं है तो बदल भी देता है। वो कहता है कि देखता हूं समस्त देवों को, समस्त भूतों को, कमल पर बैठे हुए ब्रह्मा को, महादेव को—ये बड़ी उल्टी अनुभूतियां हैं। ब्रह्मा और महादेव दो छोर हैं। ब्रह्मा का अर्थ है जिसने सृजन किया, और महादेव का अर्थ है जो करता हो विध्वंस। अर्जुन ये कह रहा है कि साथ-साथ देखता हूं : ब्रह्मा को, महादेव को। उसने जिसने जगत को बनाया देखता हूं आपके भीतर और जो मिटाता है उसको भी देखता हूं आपके भीतर। प्रारम्भ सृष्टि का और अन्त। जन्म-मृत्यु साथ-साथ देखता हूं। सारी शक्तियां

—सारी दिव्य शक्तियां दिखाई पड़ रही हैं। हे सम्पूर्ण विश्व के स्वामी ! कितने आपके पेट, कितने नेत्र !

अगर हम थोड़ी कल्पना करें तो ख्याल में आ जाए। अगर हम पृथ्वी के सारे मनुष्यों के हाथ जोड़ लें, सारे मनुष्यों के पेट जोड़ लें, सारे मनुष्यों की आंखें जोड़ लें, सारे मनुष्यों के सब अंग जोड़ लें तो जो रूप बनेगा, वो भी पूरी खबर नहीं देगा क्योंकि, हमारी पृथ्वी बड़ी छोटी है, और ऐसी हजारों-हजार पृथ्वियों पर हम जैसे हजारों-हजार प्रकार के जीवन हैं। अब तो वैज्ञानिक कहते हैं कि कम से कम पचास हजार पृथ्वियों पर जीवन की संभावना है। परमात्मा का तो अर्थ है : समस्त—समष्टि का जोड़। तो हम सबको जोड़ लें, आदमियों को जोड़ें, पशु-पक्षियों को भी जोड़ें और सारी अनन्त पृथ्वियों के जीवन को जोड़ लें—तब कितने हाथ, कितने मुंह, कितने पेट—वो सब अर्जुन को दिखाई पड़े होंगे। हम उसकी दुविधा समझ सकते हैं। ये सब जुड़ा हुआ दिखाई पड़ा होगा। वो किंकर्त्तव्य विमूढ़ हो गया होगा। उसकी कुछ समझ में नहीं आता होगा कि क्या है ? इसलिए, वो फिर पूछ रहा है कि ये सब क्या है ? और इतना सब देखता हूं फिर भी न तो आपका अन्त दिखाई पड़ता है, न आदि दिखाई पड़ता है। ये सब देख रहा हूं फिर भी मुझे ऐसा नहीं लगता कि आपको पूरा देख रहा हूं क्योंकि मुझे प्रारम्भ का कुछ पता नहीं चलता, अन्त का भी कोई पता नहीं चलता।

इसमें छोटी-सी एक बड़ी कीमती बात है। अर्जुन कहता है कि मध्य भी दिखाई नहीं पड़ता। इसमें हमें थोड़ा संदेह होगा। क्योंकि फिर जो दिखाई पड़ता है—वो क्या है ? अर्जुन को जो दिखाई पड़ रहा है—इतने तक बात तर्कयुक्त है कि मुझे प्रारम्भ नहीं दिखाई पड़ता, अन्त नहीं दिखाई पड़ता। आप नदी के किनारे खड़े हैं : न आपको नदी का प्रारम्भ दिखाई पड़ता है न सागर में गिरते समय नदी का अन्त दिखाई पड़ता है। लेकिन मध्य तो दिखाई पड़ता है। जहां आप खड़े हों वो क्या है ? तो हमें लगेगा कि अर्जुन कहता है कि न मुझे प्रारम्भ दिखाई पड़ता है और न अन्त दिखाई पड़ता है, न मुझे मध्य दिखाई पड़ता। कारण है उसके कहने का। क्योंकि जब हमें आदि न दिखाई पड़ता हो—अन्त न दिखाई पड़ता हो तो जो हमें दिखाई पड़ता हो उसे मध्य कहना गलत है। मध्य का मतलब ही है कि

आदि और अन्त के बीच में। जब हमें दोनों छोर ही दिखाई नहीं पड़ते तो इसे हम मध्य भी कैसे कहें ? दो छोर के बीच का नाम मध्य है। अगर आपको दोनों छोर दिखाई ही नहीं पड़ते तो हम इसे भी कैसे कहें कि ये मध्य है। इसलिए अर्जुन कहता है कि न तो मुझे मध्य दिखाई पड़ता, न आदि दिखाई पड़ता, न अन्त दिखाई पड़ता।

सब कुछ दिखाई पड़ रहा है विराट, फिर भी मुझे कुछ दिखाई नहीं पड़ रहा है। ये बिल्कुल जैसे एक बेबसी की घड़ी आदमी पर उतर आई हो। उसकी बुद्धि बिल्कुल चकरा गई। मैं आपका मुकुट-युक्त, गदा-युक्त और चक्र-युक्त प्रकाशमान तेज का पुन्ज, प्रज्ज्वलित अग्नि और सूर्य के सदृश ज्योतियुक्त, देखने में अति गहन और अप्रमेय स्वरूप सब ओर देखता हूं। बहुत गहन है जो मैं देख रहा हूं। गहन का यहां ख्याल ले लेना जरूरी है। गहन का अर्थ है जो मैं देख रहा हूं वह सतह मालूम होती है और सतह के पीछे और सतह, सतह के पीछे और सतह, और सतह के पीछे और गहराइयां दिखाई पड़ रही हैं। ये ऐसा लगता है कि मैं आपके बाहर खड़ा होकर देख रहा हूं—मुझे पहला परदा दिखाई पड़ रहा है और उस परदे के पीछे परदे ट्रांसपरेंट मालूम पड़ते हैं। जैसे नदी के किनारे खड़े हों, पानी में गहराई दिखाई पड़ती है। और गहरा, और गहरा, और गहरा; और ये गहराई कहां पूरी होती है उसका मुझे कोई पता नहीं। ऐसा आपको गहन देखता हूं। अप्रमेय, और जो देखता हूं वो ऐसा है कि जिसके लिए न तो कोई प्रमाण हैं कि मैं क्या देख रहा हूं, न मेरी बुद्धि के पास कोई तर्क है जिससे मैं अनुमान कर सकूं कि क्या देख रहा हूं—न मेरे पास कोई निष्पत्ति है, न कोई सिद्धांत है कि मैं क्या देख रहा हूं। अप्रमेय का अर्थ है कि अगर अर्जुन दूसरे को जाकर कहेगा तो दूसरा समझेगा कि ये पागल है, जो इसने देखा, इसका दिमाग खराब हो गया। इसलिए जिन्होंने देखा है उसे, वो कई बार तो आप उन्हें पागल न कहें इसलिए आपसे कहने से रुक जाते हैं। क्योंकि अगर वे कहेंगे तो आप भरोसा तो करने वाले नहीं हैं। आपको शक होने लगेगा कि इस आदमी का इलाज करवाना चाहिए कि ये क्या कह रहा है। ये जो कह रहा है किसी भ्रम में खो गया है या तो विक्षिप्त हो गया है।

आज पश्चिम के मनसविद् कहते हैं कि जिन लोगों को हम पागल करार दे रहें हैं उनमें सभी पागल हों ये जरूरी नहीं है। उनमें कुछ ऐसे लोग

भी हो सकते हैं जिन्होंने जगत को किसी और पहलू से देख लिया और मुसीबत में पड़ गए। लेकिन जब एक दफे जगत को कोई और किसी पहलू से देख ले तो हमारे बीच फिर बैठ नहीं पाता फिर वो जो कहता है वो हमें मालूम पड़ता है कि किसी स्वप्न की बात कर रहा है या वो जो बताता है हमारी भाषा में, हमारे अनुभव में, उसका कोई मेल न होने से वो व्यर्थ मालूम पड़ता है।

सूफी फकीर कहते रहे हैं कि जब तक योग्य आदमी न मिल जाये तब तक अपने भीतर के अनुभव कहना ही मत, नहीं तो तुम मुसीबत में पड़ोगे। और ऐसी मुसीबत आती रही है, 'अल्इल्हाद' जोर से चिल्लाकर कह दिया कि मैं ब्रह्म हूं—अनलहक, जोर से चिल्ला कर कह दिया और लोगों ने पकड़कर उसकी हत्या कर दी। तुम और ब्रह्म, इसी गांव में पैदा हुए, बड़े हुए, तुम और ब्रह्म। ये कुफ्र है, ये तुम पाप कर रहे हो कि अपने को ब्रह्म कहो। 'अल्इल्हाद' ने उन लोगों से बात कह दी जिनसे नहीं कहनी थी। निश्चित ही उनको ये बात ऐसी मालूम पड़ेगी कि धोखा है या ये आदमी पागल है। 'अल्-इल्हाद' का अनुभव हुआ था लेकिन जो हुआ था वो इतना बड़ा था कि ब्रह्म से छोटे शब्द से नहीं कहा जा सकता था। और जो हुआ था, वो इतने निकट था, अपने से भी ज्यादा निकट कि इसके सिवाय कि 'मैं ब्रह्म हूं' और कोई उपाय नहीं था, लेकिन वो गलत लोगों के बीच कह दी बात।

इस मुल्क में हमने ऐसी व्यवस्था की थी कि जब भी कोई इस तरह की घटना और अनुभव कोई कहे तो उन लोगों को कहें जो समझ सकते हैं। उनसे कहें जो शब्द में न अटक जायेंगे। उनको कहें जिनकी खुद की भी कोई प्रतीति हो, कबीर से लोग पूछते रहे निरंतर कि कहिए आपको भीतर क्या हुआ ? तो कबीर कहते कि सुनने वाला आ जाए, थोड़ा रुको।

एक दफा बुद्ध एक गांव में गए, सारे लोग इकट्ठे हो गए। बुद्ध बैठ गए। लेकिन वे देखते रहे चारों तरफ, जैसे किसी को खोजते हों। तो लोगों ने कहा कि शुरू भी करिए, बुद्ध ने कहा : मैं प्रतीक्षा करता हूं कि वो जो समझ सकता है गांव में, वो अभी आया नहीं। ये भी हो सकता है कि बुद्ध बहुत से अनुभव कह ही न पाये हों। एक बार जंगल से गुजरते वक्त आनंद ने बुद्ध से पूछा कि आपने जो-जो जाना है, वह हमसे कह दिया। पतझड़ के दिन थे

और सारे जंगल में सूखे पत्ते गिर रहे थे, उड़ रहे थे—तो बुद्ध ने एक मुट्ठी में सूखे पत्ते ऊपर उठा लिए और कहा आनंद मेरी मुट्ठी में कितने सूखे पत्ते हैं। आनंद ने कहा ४-६, और बुद्ध ने कहा : इस जंगल में कितने सूखे पत्ते जमीन पर पड़े हैं। आनंद ने कहा. अनंत तो बुद्ध ने कहा कि मैंने जितना जाना—वो इन अनंत पत्तों की तरह है, और जितना मैंने तुमसे कहा वो मुट्ठी में मेरी जितने पत्ते हैं उनकी भांति। क्योंकि अमृत भी ज्यादा हो जाए तो जहर हो जाता है तुम झेल न पाओगे। ये जो अर्जुन को दिखाई पड़ा होगा विराट, अप्रमेय, जिसकी बुद्धि कभी कोई कल्पना भी नहीं कर सकती थी, अनुमान भी नहीं कर सकती थी, सोच भी नहीं सकती थी; जिसकी तरफ कोई उपाय न था, वो उसे दिखाई पड़ा। ये अप्रमेय स्वरूप सब ओर देखता हूं। और ऐसा नहीं है कि आप ही अप्रमेय हो गए कृष्ण, अर्जुन कह रहा है सब तरफ, जो कुछ भी है, इस समय, सभी बुद्धि अतीत हो गया है। कुछ भी समझ में नहीं आता। मेरी समझ बिल्कुल खो गई है, मैं बिल्कुल शून्य हो गया हूं।

● संकलन : *अरविन्दकुमार*, जबलपुर

ध्यान-साधना-शिविर : इन्दौर

विचारो मत, जो होता है होने दो

होने देने में ही सफलताएं निहित हैं !

कल्पना भी किसी को न थी कि पश्चिमी मध्य-प्रदेश में ध्यान-शिविर का आनन्द जन साधारण को उपलब्ध हो सकेगा। अचानक २ नवम्बर को स्वामी आनन्द हरीश से चर्चा हुई और ३ दिसम्बर से इन्दौर में ध्यान-शिविर आयोजित करने का तय हो गया। न ही इन्दौर केन्द्र के पास पैसा था और न ही धन एकत्रित करने के लिये समय। विचार करना भी दुर्लभ था कि शिविर होगा। प्रचार-प्रसार के लिये भी व्यवस्था नहीं थी। कार्य-कर्ता कहां से आयेंगे, सम्भावना नहीं थी। शिविर के लिये स्थान का चयन

भी न हो पाया था। १५ दिन बीत गये, सभी मौन थे। नगर में प्रतिदिन प्रभु श्री के प्रवचन चल रहे थे। सभी व्यस्त थे।

इन्हीं दिनों गीता जयन्ति का कार्यक्रम, नगर में साधु-संतों के आगमन की भारी चहल-पहल, धार्मिक कार्यों में रुचि रखने वाले व्यस्त और धर्म प्रेमी जनता का आकर्षण भी एकमात्र गीता-भवन बना हुआ था। इस हेतु राज्य परिवहन की विशेष व्यवस्थायें थीं। राज्य के मुख्य-मंत्री के आगमन की तैयारियां चल रही थीं। समाचार-पत्र भी व्यस्त थे। ठीक ऐसे ही समय इन्दौर के बड़ा रावला में ध्यान करते हुए केन्द्र के कार्यकर्त्ताओं ने यहां के इन पुराने जमींदार से चर्चा करने की इच्छा व्यक्त की। अपने आपको कंजूस कहनेवाले भगवान श्री के परमभक्त इन श्री निहालकरण जी जमींदार ने शिविर आयोजन हेतु गीता-मंदिर निःशुल्क प्रदान करने की अनुमति दे दी। स्मरण रहे कि इन्होंने इससे पूर्व भी इन्दौर नगर से ७ मील की दूरी पर रालामंडल स्थित ३-४ लाख की लागत से बनी अपनी कोठी भगवान श्री के निवास के लिये देने की इच्छा व्यक्त की हुई है।

जमींदार जी ने गीता-मंदिर दिया। केन्द्र के वर्तमान अध्यक्ष श्री मेहता जी ने प्रचार-पत्र हेतु कागज दिया, मोती-प्रेस के कार्यकर्त्ता ने निःशुल्क प्रकाशित किया। केन्द्र के मामा जी ने अपने यहां आगन्तुक शिविरार्थियों को ठहरने का स्थान उपलब्ध किया और केन्द्र के प्रभुजनों ने आगन्तुकों के भोजन की व्यवस्था भिन्न-भिन्न तिथियों में अपने निवास पर की। फिर क्या था, समाचार-पत्रों ने भी समाचार प्रकाशित करना प्रारम्भ कर दिया। प्रतिदिन समाचार छपने लगे।

२ दिसम्बर की सन्ध्या से शिविरार्थियों का आगमन प्रारम्भ हो गया। आसपास से नगर में आये शिविरार्थियों के अतिरिक्त झबुआ, सिरोलिया, क्षिप्रा, देवास और नीमच से भी पर्याप्त संख्या में शिविरार्थी सम्मिलित हुए। ३ दिसम्बर को प्रातः ५॥ बजे कीर्तन मंडली के नगर भ्रमण से शिविर कार्यक्रम का समारम्भ हुआ। प्रतिदिन प्रातः कीर्तन मंडली का नगर के विभिन्न भागों में भ्रमण करते हुए शिविर-स्थल पर पहुंचने के पश्चात प्रातः ७ बजे से ९ बजे तक भगवान श्री के प्रवचन। रात्रि ९॥ से १०। तक कीर्तन ध्यान का कार्यक्रम निरन्तर ११ दिसम्बर तक चलते रहे। गीता जयन्ती ६ दिसंबर को गीता के बारहवें अध्याय पर भगवान श्री का प्रवचन 'शक्तिपात-योग'

पर हुआ और भगवान श्री के ४३ वें जन्म-दिन को संध्या ७ बजे शक्तिपात-योग प्रणाली से त्राटक ध्यान का कार्यक्रम हुआ जिसमें सम्मिलित व्यक्तियों की संख्या भी ४३ ही थी। ६ दिन में हुए कुल १८ प्रवचनों का आनन्द हजारों लोगों ने लिया। प्रवचन में उपस्थित श्रोतागण कीर्तन ध्यान में जब सम्मिलित होते तो स्थान का अभाव रहते भी बाहर खड़े दर्शकगण आनन्द में डूब जाते थे।

'समाधि के सप्त द्वार' पर हुए प्रवचन के फलस्वरूप ध्यान में उतरने वालों की संख्या में प्रतिदिन २५ से ३० प्रतिशत वृद्धि होती गई। अन्त में महिला और पुरुषों में ५ ने गैरिक और ने श्वेत वस्त्रों में संन्यास लिया। भारी संख्या में लोग सदस्य और सहयोगी बने। बहुतों ने श्रद्धालु होकर अनुकरणीय भाव व्यक्त किये और संकल्पित हुए।

शिविर सम्पन्न होने के पश्चात दो दिन तक कीर्तन मण्डली का नगर भ्रमण चलता रहा, स्वामी आनन्द वेदान्त, मां योग विभूति, स्वामी अनिकेतन भारती आदि की कीर्तन-ध्यान मुद्राओं को देख पथ पर जा रहे पथिक प्रभावित होकर कीर्तन-ध्यान में सम्मिलित हो जाते थे, ऐसे लोग जिन्हें धर्म के नाम से चिढ़ थी वे वे भगवान श्री की वाणी को श्रवण कर समर्पित हो गये, राजनैतिक और जासूसी घटनाओं को पढ़कर आनंद लेने वालों ने प्रभु श्री का साहित्य क्रय किया। स्थिति यहां तक बनी कि पाठकों को बम्बई से साहित्य उपलब्ध होने के अभाव में धैर्य और प्रतीक्षा के लिए अनुरोध करते रहना पड़ा।

शिविर कार्यों के आरम्भ से अंत तक हर आवश्यकता की पूर्ति में, हर समस्या के समापन में और ध्यान से प्रवचन तक वाणी में दर्शकों, श्रोताओं, ध्यानार्थियों और कार्यकर्ताओं ने भगवान श्री का प्रत्यक्ष सानिध्य अनुभव किया, जबकि यह सान्निध्य परोक्ष था, यही महिमा है प्रभु की।

प्रभु आशीष से सम्पन्न हुआ यह शिविर जैसा आनन्द प्रदान कर सका, ऐसा आनन्द पहले कभी उपलब्ध नहीं हुआ, ये शब्द (नेत्रजल से) अश्रु पूरित विदाई के समय भीने भावों में मां योग बिभूति, स्वामी आनन्द वेदान्त, स्वामी आनंद हरीश, स्वामी अनिकेतन भारती, स्वामी राममूर्ति सरस्वती, रामानंद भारती और स्वामी सत्यानन्द तीर्थ ने व्यक्त किए।

□ *स्वामी आनंद गौतम*
इन्दौर

तुलसी मानस प्रकाशन

हरिकिशनदास अग्रवाल द्वारा लिखित

संक्षिप्तरूप में आधुनिक ढंग से आध्यात्मिकता की ओर प्रेरित करने वाली जीवनोपयोगी पुस्तकें

१. संसार का सार (हिन्दी में) ३–००
२. ज्ञान साधना : २–००
३. विज्ञान से ज्ञान : १–००
४. वेदान्त-नवनीत : २–००
५. वेदान्त का सरल बोध : २–००
६. आध्यात्मिक पिक्टोरियल (हिन्दी व अंग्रेजी) : ४–००
७. आध्यात्मिक डायरी १९७३ ७–५०
८. आध्यात्मिक चित्रावली (हिंदी-इंग्लिश) पाकेट बुक ६–००
९. मुमुक्षु (शिक्षाप्रद उपन्यास) ५–००
१०. मन की शांति (पद्य) : अंग्रेजी 'पीस ऑफ माइंड' का हिन्दी अनुवाद ४–००
११. हमारी परंपरा : २–००
१२. आराम सुख शांति और आनंद : १–००
१३. Ease Peace Happiness and Bliss (English) 0–25
१४. अपनी ओर इशारा : १–००
१५. व्यवहारिक जीवन और परमात्मा : १–००
१६. श्मशान यात्रा : १–००
१७. मेरे १०८ गुरु : ३–००
१८. सजगता : १–००
१९. अविरोध-निरोध और स्वबोध : २–००
२०. वेदान्त का वैज्ञानिक मनन: २–००
२१. चिंता और निश्चिंतता : २–००
२२. मन के पार : विकट प्रश्नों पर आचार्य श्री रजनीश जी के उत्तर : १–००
२३. घर-घर की समस्या : २–००
२४. पीस आफ माइन्ड : (अंग्रेजी में) ५–००
२५. क्वायटर मोमेन्ट्स : (अंग्रेजी में) : २–००
२६. मनन योग्य बातें : १–००
२७. उनके सान्निध्य में : २–००
२८. जाग रे जाग ४–००
२९. जाग्रत-जाग्रत : ०–५०
३०. आधुनिक वेदान्त : २–००
३१. आंखों देखी २–००
३२. बात-बात में बात ३–०० (आध्यात्मिक उपन्यास)
३३. अध्यात्म–नवनीत २–००
३४. साधना शिविर ३–००
३५. 'मनन' आध्यात्मिक मासिक वार्षिक शुल्क : ५–००

ग्राहक एवं एजेन्ट्स एवं पुस्तक विक्रेता पत्र-व्यवहार करें

तुलसी – मानस – प्रकाशन

अन्तर्गत विभाग केबल मार्केटिंग कम्पनी
गुप्ता मिल्स स्टेट, रे रोड, बम्बई–१०

Bhagwan Rajneesh Literature

I Original English Books

1. The Inward Revolution 15.00
2. I am the Gate 10.00
3. Dynamics of Meditation 15.00
4. The Silent Explosion 12.50
5. Wisdom of folly 6.00
6. Thus spake Mulla Nasrudin 6.00
7. Meditation : A new Dimension 3.00
8. Beyond & Beyond 3.00
9. What is Meditation ? 3.00
10. Secrets of Descipleship 3.00
11. Flight of the alone to the alone 2.50
12. LSD : A shortcut to False Samadhi 2.00
13. Yoga : A spontaneous Happening 2.00
14. The Gateless Gate 2.00
15. The Slient Music 2.00
16. Turning In 2.00
17. The Eaternal Message 2.00
18. The Dimensionless Dimension 2.00
19. Seriousness 2.00
20. The Vital Balance 1.50

II Translated from Original Hindi

21. From Sex to Superconsciousness 6.00
22. Path to self Realisation 5.00
23. Earthen Lamps 4.50
24. Seeds of Revolutionary Thought 4.50
25. Mysteries of life & Death 4.00
26. Wings of Love & Random Thoughts 3.50
27. Towards the Unknown 1.50
28. Lead kindly light 1.50

III Critical Studies on Bhagwan Shri Rajneesh

29. Acharya Rajneesh : The Mystic of feeling 20.00
30. Lifting the veil 10.00
31. Acharya Rajneesh : A Glimpse 1.25

पत्र-पत्रिकाएं

	प्रकाशन स्थल	वार्षिक मूल्य
१ युक्रांद (हिन्दी मासिक) :	C/o युक्रांद प्रकाशन, ७६०, राइट-टाउन, जबलपुर	१२-००
२ आनंदिनी (हिन्दी-मासिक):	C/o सुप्रीम वूलन मिल्स, इंडस्ट्रियल स्टेट, लुधियाना	१०-००

(P.T.O.)

३ योग दीप (मराठी पाक्षिक): C/o जीवन जागृति केन्द्र, १०-००
१०१, टिम्बर मार्केट, पूना

४ SANNYAS (English Bi-Monthly) C/o १८-००
Selprint, A. Z.,Industrial Area,
Fergusson Road, Lower Parel,
BOMBAY : 13

५ "रजनीश-पत्रिका" (गुजराती मासिक) जीवन-जागृति-केन्द्र, १०-००
भवानी चेम्बर्स, आश्रम रोड, अहमदाबाद–९

साहित्य प्राप्ति हेतु संपर्क स्थल :

(१) ईश्वर-समर्पण, जीवन जागृति केन्द्र, ३१, इजरायल मोहल्ला, भगवान भुवन, मस्जिद बंदर रोड, बम्बई ९ : फोन : ३२७००१

(२) स्वामी सत्य बोधि सत्व, जीवन जागृति केन्द्र, भवानी चेम्बर्स, आश्रम रोड, अहमदाबाद-९, फोन : ७६५७३

(३) स्वामी अमृत बोधि सत्व, जीवन जागृति केन्द्र, १०१, टिम्बर मार्केट, पूना-१, फोन : २४१४८

(४) स्वामी आनन्द गौतम, जीवन जागृति केन्द्र, ४१६, महात्मा गांधी मार्ग, इन्दौर-१

(५) अरविन्द कुमार, जीवन जागृति केन्द्र, ७८१, राइट-टाउन, जबलपुर फोन : २९५७

(६) स्वामी दयाल भारती, जीवन जागृति केन्द्र, कबूला पुल, सागर

(७) स्वामी आनन्द वेदांत, घंटाघर, नीमच (म. प्र.)

(८) स्वामी निकलंक भारती, विजय गृह निर्माण सामग्री भंडार, गाडरवारा

(९) मोतीलाल बनारसीदास, बुक-सेलर्स एवं पब्लिशर्स बंगलो रोड, जवाहर नगर, दिल्ली-७

(१०) मोतीलाल बनारसीदास, अशोक राज पथ, पटना-४

(११) चंद्रकांत न० पटेल, आसोपालव, अपोजिट : बैंक आफ इंडिया, रावपुरा, बड़ोदा (गुज०)

●